श्री श्री गुरु-गौराङ्गो जयत :

पुनरागमन

पुनर्जन्म का विज्ञान

vUrjkZ"Vªh;कृष्णभावनामृत संघ के संस्थापकाचार्य
कृष्णकृपामूर्ति
श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद
की शिक्षाओं पर आधारित

भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट

कृष्णकृपामूर्तिं श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद द्वारा विरचित वैदिक ग्रंथरत्न :

श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप

श्रीमद्भागवतम् (18 भागों में)

श्रीचैतन्य-चरितामृत (9 भागों में)

लीला पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण

भक्तिरसामृतसिन्धु

भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु का शिक्षामृत

श्रीउपदेशामृत

श्रीईशोपनिषद्

अन्य ग्रहों की सुगम यात्रा

भागवत का प्रकाश

आत्म-साक्षात्कार का विज्ञान

कृष्णभावनामृत : सर्वोत्तम योगपद्धति

पूर्ण प्रश्न पूर्ण उत्तर

भगवान् कपिल का शिक्षामृत

महारानी कुन्ती की शिक्षाएँ

राजविद्या - ज्ञान का राजा

जीवन का स्रोत जीवन

जन्म-मृत्यु से परे

– पुनर्जन्म

योगपथ – आधुनिक युग के लिए योग

योग की पूर्णता

नारद भक्ति-सूत्र

गीतासार

गीतार गान (बंगला)

भगवद्दर्शन पत्रिका (संस्थापक)

अधिक जानकारी तथा सूचीपत्र के लिए लिखें :

भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, हरे कृष्ण धाम, जुहू, मुंबई 400049

ये पुस्तकें हरे कृष्ण केन्द्रों पर भी उपलब्ध हैं। कृपया अपने निकटस्थ केन्द्र से सम्पर्क द

इस ग्रंथ की विषयवस्तु में जिज्ञासु पाठकगण अपने निकटस्थ किसी भी इस्कॉन केन्द्र से अथवा निम्नलिखित पते पर पत्र-व्यवहार करने के लिए आमंत्रित हैं :

भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट
हरे कृष्ण धाम जुहू,
मुंबई 400041
Web / E-mail
www.indiabbt.com
admin(a)indiabbt.com
Coming Back (Hindi)
1st printing in India: 10,000 copies
2nd to 20th printings: 2.96,000 copies
21th Printing, August 2015:30,000 copies
(C) 1983 भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट सर्वाधिकार सुरक्षित
ISBN: 978-93-82.716-94-5

प्रकाशक की अनुमति के बिना इस पुस्तक के किसी भी अंश को पुनरुत्पादित, प्रतिलिपित नहीं किया जा सकता। किसी प्राप्य प्रणाली में संग्रहित नहीं किया जा सकता अथवा अन्यकिसी भी प्रकार से चाहे इलेक्ट्रोनिक, मेकेनिकल, फोटोकॉपी,

रिकार्डिंग से संचित नहीं किया जा सकता। इस शर्त का भंग करने वाले पर उचित कानूनी कार्यवाही की जाएगी।

भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित।

AL3T

“मेरा विश्वास है कि पुनर्जन्म एक सत्य है, और यह कि जीवन का आविर्भाव मृत से होता है और मृत लोगों की आत्माएँ अस्तित्वमें होती हैं।'

-सुकरात

“आत्मा मनुष्य देह में बाहर से आती है, जैसे एक अस्थायी निवास में, तथा फिर से बाहर चली जाती है अन्य स्थानों में, क्योंकि आत्मा अमर है।'

-राल्फ वाल्डो इमर्सन

जर्नल्स ऑफ राल्फ वाल्डो इमर्सन

'मैंने अपना जीवन तब प्रारम्भ नहीं किया जब मैंने जन्मलिया, न ही जब मैंने गर्भ में प्रवेश किया। मैं अनेक, असंख्य युगोंमें बढ़ता और विकसित होता रहा हूँ मेरी सारी पूर्व-आत्माओं कीध्वनियाँ, प्रतिध्वनियाँ और प्रेरणाएँ मुझ में हैं ओह, मैं असंख्य बार पुन: पैदा होऊँगा।'

-जेक लंडन

दि स्टार रोवर

'मृत्यु होती ही नहीं। यदि प्रत्येक वस्तु ईश्वर का ही अंश है, तोमृत्यु हो ही कैसे सकती है? आत्मा तो कभी मरता नहीं, और शरीर कभी सचमुच में जीवित होता ही नहीं है।'

-ईसाक बेशेविस
सिंगर
नोबेल पुरस्कार
विजेता
बिहाइन्ड दि स्टॉव की
कहानियों में से

V

“उसने इन सभी रूपों और चेहरों को सहस्त्रों सम्बन्धों में परस्पर जुड़े हुए देखा नया जन्म लेते हुए देखा। सारे सम्बन्ध मत्र्य थेक्षणभंगुर वस्तुओं का एक आवेशपूर्ण, दु:खदायी उदाहरण। उनमें से कोई नहीं मरा, वे केवल बदल गये, सदा जन्मते रहे; निरन्तर उन्हें नया चेहरा मिलता रहा; केवल काल ही था जो एक चेहरे और दूसरे चेहरे के बीच खड़ा था।'

—हरमन
हेस

नोबेल पुरस्कार
विजेता, सिद्धार्थ

“पहली बार यह विचार करने से पूर्व कि जीवन में खाने, लड़ने अथवा समूह में धाक जमाने से बढ़कर भी कुछ है, क्या आपने कभी यह सोचा है कि हम कितने जीवनों से गुजर चुके होंगे? एक हजार जीवन, जोन, दस हजार!.जो कुछ हम वर्तमान जीवन में सीखते हैं, उसी में से हम अगला जीवन चुनते हैं। किन्तु जोन, तुमने एक ही जीवन में इतना कुछ सीख लिया है कि तुम्हें यहाँ तक पहुँचने के लिए एक हजार जीवनों में से गुजरना नहीं पड़ा।"

—रिचर्ड बाख
जोनाथन लिवींस्टन सीगल

“जिस प्रकार हम अपने वर्तमान जीवन में सहस्त्रों स्वप्नों के बीच जीते हैं, वैसे ही हमारा वर्तमान जीवन उन सहस्त्रों जीवनों में से एक है जिसमें हम एक अन्य, अधिक यथार्थ जीवन से प्रवेश करते हैं.और तब मृत्यु के बाद वापस लौट जाते हैं। हमारा जीवन उस अधिक यथार्थ जीवन के स्वप्नों में से केवल एक है, और इसलिए यह अनन्त प्रक्रिया उस अन्त तक, उस सत्य जीवन-ईश्वरीय जीवन में पहुँचने तक चलती रहती है।"

-काउन्ट लियो
टॉल्सटॉय

विषय-सूची

आमुख – अमरतत्व की खोज 11

भूमिका – चेतना का रहस्य 14

1. पुनर्जनम : सुकरात से सेलिंगर तक 18

प्राचीन यूनान 21

यहूदी धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम 21

मध्य युग और पुनर्जागरण 23

नव-आलोक का युग 23

अध्यात्मवाद 24

आधुनिक युग 25

भगवद्गीता : पुनर्जनम पर कालातीत स्रोत-ग्रन्थ 28
2. शरीरों का परिवर्तन 33
आत्मा की प्रतीति कैसे हो ? 34
"मैं ब्रह्म अर्थात् आत्मा हूँ".....35
इसी जीवन में पुनर्जन्म 36
शरीर स्वप्नवत् है 37
प्रत्येक व्यक्ति जानता है, "मैं यह शरीर नहीं हूँ" 39
मानव जीवन का ध्येय.....40
पूर्णता कैसे प्राप्त करें? 42
पशुओं से ऊपर उठना 42
अमरतत्व का रहस्य 44
3. आत्मानुसन्धान 45

हृदय-शल्यचिकित्सक जानना चाहते हैं कि आत्मा है क्या? 45
श्रील प्रभुपाद वैदिक साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं 47
4. पुनर्जन्म के तीन इतिवृत्त 50
1. दस लाख माताओं वाला राजकुमार 51
2. ममता का शिकार 57
राजा भरत हिरन का जन्म लेते हैं 60
जड़ भरत का जीवन 61
राजा रहूगण को जड्भरत का उपदेश 63
3. उस पार के आगन्तुक 67
5. आत्मा की रहस्य-यात्रा .....
एक जीवन समय की एक कौंध है .....
तुम्हें अपना अभीष्ट शरीर प्राप्त होता है .....
मृत्यु का अर्थ है, अपने पिछले जीवन की विस्मृति .....
आत्मा पहले मानव-शरीर ग्रहण करता है .....
आधुनिक वैज्ञानिक पुनर्जन्म के विज्ञान से अनजान हैं .....
पुनर्जन्म का अज्ञान भयावह है .....

और तू मिट्टी में लौट जायेगा" .....
ज्योतिष-विज्ञान और पुनर्जन्म .....
आपके विचार आपके भावी शरीर का सृजन करते हैं . . . .
कुछ लोग पुनर्जन्म क्यों स्वीकार नहीं कर सकते? . .....
राजनेता अपने देशों में पुनर्जन्म ग्रहण करते हैं .....
पशु हत्या में क्या दोष है? .....
विकास : योनियों के मार्ग से आत्मा की यात्रा .....
माया का भ्रम .....
6. पुनर्जन्म का तर्क-विज्ञान .....
7. लगभग पुनर्जन्म .....
पुनर्जन्म : वास्तविक शरीर-बाह्य अनुभव .....
पुनर्जन्म के विषय में सम्मोहन से उत्पन्न प्रत्यावर्तन
हमें पूर्ण ज्ञान नहीं देते हैं
एक बार मानव, सदा मानव ? .....
मृत्यु कष्टरहित परिवर्तन नहीं है .....
8. लौट कर मत आओ .....
कर्म और पुनर्जन्म से छुटकारा पाने के लिए व्यावहारिक प्रणालियाँ .....
श्रील प्रभुपाद के विषय में .....

समर्पण

यह पुस्तक हम हमारे परम प्रिय गुरुदेव एवं मार्गदर्शक श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद को अर्पित करते हैं, जिन्होंने पुनर्जन्म के प्रामाणिक विज्ञान के साथ-साथ भगवान् श्रीकृष्ण की दिव्य शिक्षाएँ पाश्चात्य जगत् को प्रदान कीं।

-प्रकाशक

आमुख

अमरत्व की खोज

हम ऐसा व्यवहार कर रहे थे जैसे हमें सदैव जीवित रहना हैं; बीटल्स के दिनों में प्रत्येक व्यक्ति यही सोचता था, ठीक है ? मेरा मतलब है, हम में से कौन सोचता था कि हमें मरनाहै?

&HkwriwoZ chVy ikWy eSDdkVZus

यदि आप अपनी नियति को सचमुच अपने वश में लाना चाहते हैं, तो आपको पुनर्जन्म और उसकी विधि को समझना होगा। इतना सरल है यह।

कोई मरना नहीं चाहता। हममें से अधिकतर चाहेंगे कि वे बिना झुर्रियों के या गठिया रोग या सफेद बाल हुए बिना, अपनी पूरी शक्ति के साथ, सदा जीवित रहें। यह स्वाभाविक है क्योंकि जीवन का सर्वप्रथम और आधारभूत सिद्धान्त है सुख का भोग। काश! हम सदा के लिए जीवन के सुखों का भोग कर पाते।

अमरत्व के लिए मनुष्य की सनातन खोज इतनी मौलिक है किमरने की बात सोचना भी उसके लिए लगभग असम्भव है। पुलिट्जर पुरस्कार-विजेता (द ह्यूमन कॉमेडी के लेखक) विलियम सरोयन ने अपनी मृत्यु के कुछ दिवस पूर्व समाचार पत्रों के समक्ष यह घोषणा की, 'हममें से प्रत्येक को मरना है; परन्तु मैं हमेशा विश्वास करता रहा कि मेरे विषय में अपवाद बन जायेगा। लेकिन अब क्या?' यह घोषणा अधिकतर लोगों की विचारधारा की प्रतिध्वनि थी।

हममें से शायद ही कभी कोई मृत्यु अथवा मृत्यु के बाद क्या होता है इन के विषय में सोचता होगा। कुछ लोग कहते हैं कि मृत्यु प्रत्येक वस्तु का अन्त है। कुछ स्वर्ग और नर्क में विश्वास रखते हैं। अन्य कुछ लोगों का मत है कि उनका यह जीवन अनेक

बीते हुए जीवनों में से एक है और भविष्य में भी हम जीवित रहेंगे। विश्व की एक-तिहाई से भी अधिक जनता-1.5 अरब से अधिक-पुनर्जन्म को जीवन के अटल तथ्य के रूप में स्वीकार करती है।

पुनर्जन्म कोई 'विश्वास-व्यवस्था' नहीं है, न ही कोई मनोवैज्ञानिक उपाय है, जिसके द्वारा मृत्यु की 'भयंकर अन्तिमता' से बचा जा सके, बल्कि यह एक सुनिश्चित विज्ञान है, जो हमारे अतीत और आगामी जीवनों की व्याख्या करता है। इस विषय पर अनेक किताबें लिखी गयी हैं जो सामान्यता सम्मोहन-जनित भूतकाल कीLe`fr (hypnotic regression), आसन्न-मृत्यु के अनुभव,शरीरबाह्य-स्थिति की अनुभूतियाँ अथवा देजा वू अर्थात् 'मैंने कहीं, कभी, पहले भी यह देखा है" जैसे अनुभवों पर आधारित होती हैं।

किन्तु पुनर्जन्म पर लिखा गया अधिकांश साहित्य अपूर्ण ज्ञान पर आधारित है, बहुत कुछ अनुमानित, दिखावटी व अनिर्णायक है। कुछ पुस्तकें मनुष्यों के उन अनुभवों को प्रस्तुत करती हैं, जो सम्मोहन के प्रभाव से पूर्व-जन्मों की स्मृतियों तक पहुँचाए जाते हैं। वे उन घरों का विस्तृत वर्णन देते हैं जिनमें वे रहते थे, उन सड़कों का जिन परवे चले थे, उन बाग-बगीचों का जिनमें वे बच्चों के रूप में जाया करते थे, तथा अपने पूर्व-जन्म के माता-पिता, मित्रों और सम्बन्धियों का नाम बताते हैं। यह सब पढ़ने के लिए रोचक है और जहाँ इन सब पुस्तकों ने निश्चित रूप से पूर्वजन्म के प्रति बढ़ती हुई लोक-रुचि और विश्वास को उत्तेजित किया है, वहाँ दूसरी ओर ध्यानपूर्वक जाँच-पड़ताल करने से पता लगा है कि इन तथाकथित पूर्व-जन्म प्रत्यावर्तनों में से बहुत से वर्णन काल्पनिक उड़ानें हैं, त्रुटिपूर्ण हैं और यहाँ तक कि धोखाधड़ी भी हैं।

परन्तु सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि इन सब लोकप्रिय पुस्तकों में से कोई भी पुनर्जन्म से सम्बन्धित आधारभूत तथ्यों की व्याख्या नहीं करतीं, जैसे कि वह सरल प्रक्रिया क्या है जिससे आत्मा सनातन रूप से एक भौतिक शरीर से दूसरे में देहान्तरण

करता है। ऐसे विरले ही उदाहरण हैं जिनमें आधारभूत सिद्धान्तों की विवेचना की गई हो और उनमें भी सामान्यत: लेखक अपनी परिकल्पनाओं को प्रस्तुत करते हैं कि कैसे और किन सुनिश्चित मामलों में पुनर्जन्म घटित होता है, मानो कुछ विशिष्ट अथवा प्रतिभा-सम्पन्न प्राणी ही पुनर्जन्म लेते हों, अन्य नहीं। इस प्रकार का प्रस्तुतीकरण पुर्नजन्म के विज्ञान को व्याख्यायित नहीं करता, बल्कि अनेक भ्रामक कपोल-कल्पनाओं और विरोधाभासों को पैदा कर देता है, जिसके फलस्वरूप पाठक के मन में दर्जनों अनुत्तरित प्रश्न घर कर जाते हैं।

उदाहरण के लिए, क्या कोई व्यक्ति तत्काल ही पुर्नजन्म ग्रहण करता है, अथवा धीरे-धीरे, बहुत लम्बी समयावधि में? क्या दूसरे जीवधारी जैसे पशु, मानव-शरीरों में पुनर्जन्म ले सकते हैं? क्या मनुष्य पशु के रूप में प्रकट हो सकता है? यदि ऐसा है, तो कैसे और क्यों? क्या हम सदैव पुनर्जन्म लेते रहते हैं, अथवा यह कहीं समाप्त हो जाता है? क्या आत्मा सदैव नरक में दु:ख भोग सकता है, अथवा स्वर्ग मेंसदा के लिए सुख भोग सकता है? क्या हम अपने भावी पुनर्जन्मों को नियन्त्रित कर सकते हैं? कैसे? क्या हमारा पुनर्जन्म दूसरे ग्रहों अथवा दूसरे ब्रह्माण्डों में सम्भव है? क्या हमारे सत्कर्म और दुष्कर्म आगे मिलने वाले शरीर के निर्धारण में कोई भूमिका निभाते हैं? कर्म और पुनर्जन्म का क्या सम्बन्ध है ?

पुनरागमन इन प्रश्नों का पूरा-पूरा उत्तर देती है क्योंकि यह पुनर्जन्म के वास्तविक स्वरूप की वैज्ञानिक रूप से व्याख्या करती है। अन्त में, यह पुस्तक पाठक को वे व्यावहारिक निर्देश देती है, जिनसे वह रहस्यमय और सामान्यतया गलत समझे गये पुनर्जन्म के प्रत्यक्ष तथ्य को पूर्णता से समझ सके और इससे ऊपर उठ सके। पुनर्जन्म एक ऐसी वास्तविकता है, जो मानव-नियति के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

भूमिका

चेतना का रहस्य

मृत्यु मनुष्य की अत्यन्त रहस्यमयी, निष्ठुर और अपरिहार्य शत्रु है। क्या मृत्यु का अर्थ है जीवन का अन्त, अथवा क्या यह एक अन्य जीवन के लिए, अन्य आयाम के लिए अथवा दूसरे संसार के लिए द्वार खोलती है?

यदि मृत्यु के अनुभव के पश्चात् मनुष्य की चेतना जीवित रहती है, तब वह क्या है जो नूतन अस्तित्वों की ओर इसके अवस्था-परिवर्तन का निर्धारण करता है ?

इन रहस्यों की स्पष्ट जानकारी पाने के लिए, परम्परागत रूप से मनुष्य प्रबुद्ध दार्शनिकों की ओर रुख करता रहा है और उच्चतर सत्य के प्रतिनिधि रूप में उनके उपदेशों को स्वीकार करता आया है।

उच्चतर अधिकारी से ज्ञान प्राप्त करने की इस विधि की कुछ लोग आलोचना करते हैं। अन्वेषक भले ही कितनी भी सावधानी से उसका विश्लेषण करे। समाज दार्शनिक के विज्ञ ई.एफ. शूमेकर, स्मॉल इज ब्यूटीफुल के रचयिता कहते हैं कि हमारे आधुनिक समाज में जब लोग प्रकृति और परम्परागत ज्ञान से कट जाते हैं, वे 'हंसी उड़ाना फैशन की बात समझते हैं और केवल उसी पर विश्वास करते हैं जिसेवे देख, छू और मापतौल सकें" अथवा, जैसी कि कहावत है, 'ऑखों देखा सो सत्य।'

परन्तु जब मनुष्य भौतिक इन्द्रियों की पहुँच से परे, माप के उपकरणों से परे और मीमांसा के भी परे किसी तत्व को समझने का प्रयास करता है, तब उसके पास ज्ञान के उच्चतर स्रोत के पास जाने के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं रह जाता।

कोई भी वैज्ञानिक प्रयोगशाला के अनुसन्धानों के माध्यम से चेतना के रहस्य अथवा भौतिक शरीर के विनष्ट हो जाने के पश्चात् इसके गन्तव्य की सफल व्याख्या

नहीं कर सका है। इस क्षेत्र में शोध ने विभिन्न परिकल्पनाओं को जन्म दिया है, किन्तु इनकी सीमाओं को पहचानना आवश्यक है।

दूसरी ओर, पुनर्जन्म के व्यवस्थित सिद्धान्त हमारे अतीत, वर्तमान और भविष्य के जीवनों से सम्बन्धित सूक्ष्म विधानों की विस्तृत व्याख्या करते हैं।

यदि किसी को पुनर्जन्म के सिद्धान्त को सही से समझना है, तो उसे चेतना की आधारभूत धारणा को भौतिक शरीर की रचना करने वाले भौतिक पदार्थ से भिन्न और एक उत्कृष्ट शक्ति के रूप में स्वीकार करना होगा। सोचने, अनुभव करने और संकल्प करने की अद्वितीय मानव-क्षमताओं के परीक्षण से इस सिद्धान्त की पुष्टि होती है। क्या डी.एन.ए. के सूत्र अथवा आनुवांशिक कोशिकाएँ मानव की परस्पर प्रेम और सम्मान की भावनाओं को उत्प्रेरित कर सकते हैं? कौन-सा परमाणु अथवा कण शेक्सपीयर के हैमलट तथा बाख के मास इन बी माइनर में सूक्ष्म कलात्मक भेदों को पैदा करने के लिए उत्तरदायी है? मानव और उसकी अनन्त क्षमताओं की व्याख्या केवल परमाणुओं और कणों से ही नहीं की जा सकती। आधुनिक भौतिकी के जनक आईन्स्टाइन ने स्वीकार किया था कि चेतना का यथेष्ट स्वरूप का विवेचन भौतिकघटनाओं के सन्दर्भ में नहीं किया जा सकता। इस महान् वैज्ञानिक ने एक बार कहा था, 'मेरा विश्वास है कि विज्ञान के स्वयं-सिद्ध विधानों को मानव-जीवन पर लागू करने का वर्तमान फैशन न केवल पूरी तरह गलत है, अपितु कुछ हद तक निन्दा के योग्य भी है।"

सचमुच, वैज्ञानिक उन भौतिक नियमों के माध्यम से चेतना की व्याख्या करने में असफल रहे हैं, जो उनके दृष्टि क्षेत्र के भीतर अन्य सभी वस्तुओं पर लागू होती है। उस असफलता से निराश होकर शरीर-विज्ञान और औषधि-विज्ञान में नोबेल-पुरस्कार विजेता अल्बर्ट सेन्ट जॉर्ज (Albert Szent-Gyorgyi) ने दुःख प्रकट करते हुए हाल ही में कहाथा, 'जीवन के रहस्य की मेरी खोज में अन्त में मेरे हाथ परमाणु और

इलेक्ट्रॉन्स ही लगे, जिनमें कोई जीवन नहीं है। इस राह में, कहीं न कहीं, जीवन मेरी अंगुलियों के बीच से रिस कर निकल गया। अत: अपने बुढ़ापे में अब मैं अपने पूर्वकृत कार्यों पर पुन: विचार कर रहा हूँ।"

कणों की परस्पर अन्त:क्रिया से चेतना का आविर्भाव होता है, इस अवधारणा को स्वीकार करने के लिए हमें बहुत विश्वास रखना होता है-उससे भी बड़ा जिसकी आवश्यकता आध्यात्मिक व्याख्या के लिए होती है। जैसा कि विख्यात जीव-विज्ञानी, थॉमस हक्सले ने कहा था, 'मुझे यह बहुत स्पष्ट दिखाई देता है कि विश्व में एक तीसरी चीज है, अर्थात् चैतन्य, जिसे....मैं न तो भौतिक तत्व अथवा शक्ति, अथवा इनमें से किसी का भी विचार-योग्य संशोधित रूप मान सकूं।"

इसके अतिरिक्त चेतना के अद्वितीय गुण-लक्षणों की स्वीकृति भौतिकी नोबेल पुरस्कार विजेता नील्स बोर ने दी थी, जिसने कहा था, 'हमें स्वीकार करना होगा कि भौतिकी अथवा रसायन विज्ञान में हम ऐसा कुछ नहीं पा सकते, जिसका चेतना के साथ दूर का भी कोई सम्बन्ध हो। तथापि हम सभी जानते हैं कि चेतना जैसी भी कोई चीज है, क्योंकि यह हम सभी में ही विद्यमान है। अतएव चेतना को प्रकृति का अंग माननाहोगा, अथवा अधिक सामान्य रूप से, यथार्थता का अंग, जिसका तात्पर्य यह है कि भौतिकी और रसायन विज्ञान के विधानों के बिल्कुल भिन, जैसा कि 'क्वांटम परिकल्पना' के अन्तर्गत उल्लिखित है, हमें बिलकुल भिन्न प्रकार के विधानों पर भी विचार करना होगा।" ऐसे सिद्धान्तो में पुनर्जन्म के सिद्धान्तों का भी समावेश हो सकता है, जो एक भौतिक शरीर से दूसरे में होने वाले चेतना के आवागमन का नियमन करते हैं।

इन नियमों को जानने की शुरूआत करने के लिए हम यह जान लें कि पुनर्जन्म कोई अनैसर्गिक अथवा विरोधाभासी घटना नहीं है, बल्कि एक ऐसी घटना है जो हमारे इसी जीवन-काल में, हमारे अपने शरीरों में निरन्तर घटित होते रहती है।

प्रोफेसर जॉन फाईफर अपने ग्रन्थ दि ह्यूमन ब्रेन में लिखते हैं, "तुम्हारे शरीर में उन अणुओं में से एक भी वह अणु नहीं है, जो सात वर्ष पहले थे।" प्रत्येक सात वर्षों में मनुष्य का पुराना शरीर पूरी तरह नया हो जाता है। परन्तु हमारी मूल पहचान, हमारा आत्मा, नहीं बदलता। हमारे शरीर बचपन से युवावस्था हैं, तथापि शरीरस्थ व्यक्ति, 'मैं" सदैव वैसे का वैसा बना रहता है।

पुनर्जन्म, जो भौतिकशरीर से स्वतंत्र चेतन आत्मा के सिद्धान्त पर आधारित है- उस उच्चस्तरीय व्यवस्था का अंग है जो प्राणियों के एक भौतिक रूप से दूसरे भौतिक रूप में देहान्तरण का नियंत्रण करती है। चूँकि पुनर्जन्म का सम्बन्ध आत्मा से है, जो हमारे लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, अतएव हममें से प्रत्येक व्यक्ति के लिए इसकी प्रासंगिकता सबसे बढ़कर है।

पुनरागमन कालातीत वैदिक साहित्य, भगवद्गीता में प्रतिपादित पुनर्जन्म के आधारभूत सिद्धान्तों की स्पष्ट व्याख्या करती है। 'डयेड सी स्क्रॉल्स"' (हिब्रू साहित्य के प्राचीन ग्रन्थ) से भी सहस्त्रों वर्ष पुरानी गीता, कहीं भी उपलब्ध पुनर्जन्म की व्याख्या की अपेक्षापूर्णतम व्याख्या प्रस्तुत करती है। युगों तक विश्व के अनेक महानतम चिन्तक इसका अध्ययन करते आए हैं। चूँकि आध्यात्मिक ज्ञान सनातन सत्य है और यह प्रत्येक नई वैज्ञानिक परिकल्पना के साथ नहीं बदलता, अत: यह आज भी प्रासंगिक है।

हार्वर्ड के जीव-भौतिकी के वैज्ञानिक डी.पी. डयूपे लिखते हैं, 'यदि हम हठवाद के कारण उस मान्यता से चिपके रहें, जिसके अनुसार जीवन की सम्पूर्ण व्याख्या उन प्राकृतिक नियमों के द्वारा की जा सकती है जिन्हें हम जानते हैं, तो हम अपने आप को एक अंधियारी गली में ले जायेंगे। भारत की वैदिक परम्पराओं में संजोए गये विचारों के विषय में अपने आप को मुक्त रखकर, आधुनिक वैज्ञानिक अपने कार्य को नये परिप्रेक्ष्य में देख सकते हैं तथा सभी वैज्ञानिक प्रयासों के लक्ष्य अर्थात् सत्य की खोज- को आगे बढ़ा सकते हैं।"

विश्वव्यापी अनिश्चितता के इस युग में यह अनिवार्य है कि हम अपने चेतन स्वरूप के वास्तविक उद्गम को समझे। हम किस तरह अपने आपको विभिन्न शरीरों और जीवन की अवस्थाओं में पाते हैं, और मृत्यु की घड़ी में हमारा गन्तव्य क्या होगा? यह महत्वपूर्ण ज्ञान पुनरागमन में विस्तारपूर्वक समझाया गया है।

पहले अध्याय में सुकरात से लेकर सेलिंगर तक, विश्व के अनेक महानतम दार्शनिकों, कवियों और कलाकारों को पुनर्जन्म ने किस प्रकार गहराई से प्रभावित किया है, इसका वर्णन किया गया है। इसके बाद भगवद्गीता में प्रतिपादित पुनर्जन्म की प्रक्रिया को व्याख्यायित किया गया है, जो देहान्तरण के विषय पर सबसे प्राचीन व सर्वाधिक सम्मानित मौलिक ग्रन्थ है।

अध्याय दो में कृष्णकृपामूर्ति श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद और विख्यात धर्म-मनोवैज्ञानिक प्रोफेसर कालफ्रीड ग्राफ वॉन डयुर्कहाइम के बीच एक रोचक संवाद का उल्लेख है, जो यह स्पष्टकरता है कि किस प्रकार पदार्थमय शरीर और प्रतिपदार्थमय कण अर्थात् आत्मा, एक समान नहीं हो सकते। अध्याय तीन में एक प्रसिद्ध हृदय शल्य-चिकित्सक आत्मतत्व के क्षेत्र में विधिवत् शोध किए जाने पर जोर देते हैं एवं श्रील प्रभुपाद सहस्त्रों वर्ष प्राचीन और आधुनिक औषधि-विज्ञान की अपेक्षा अधिक प्रभावी सूचनाओं से पुष्ट वैदिक संस्करण को उद्धृत करते हैं। वैदिक ग्रन्थ श्रीमद्भागवतम् के तीन रोचक प्रसंगों से चौथा अध्याय बना है। ये विवेचन वे उत्कृष्ट उदाहरण हैं, जो यह बताते हैं कि प्रकृति एवं कर्म के सुनिश्चित विधानों के अन्तर्गत विभिन्न शरीरों में आत्मा किस प्रकार देहान्तरण करता है।

पाँचवें अध्याय में श्रील प्रभुपाद के लेखों से उद्धरण हैं, जो स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करते हैं कि पुनर्जन्म के सिद्धान्त किस प्रकार हमारे दैनिक जीवन में निरंतर घटने वाली सामान्य घटनाओं और साधारण अनुभवों के माध्यम से आसानी से समझे जा सकते हैं। अगला अध्याय वर्णन करता है कि किस प्रकार पुनर्जन्म सार्वभौम एवं अच्युत

न्याय-व्यवस्था को सुनिश्चित रूप से प्रस्तुत करता है, जिसमें आत्मा को कभी भी शाश्वत रूप से अभिशापित नहीं किया जाता बल्कि वैधानिक रूप से उसे स्थायी अवसर दिया जाता है, जिससे कि वह निरन्तर चलनेवाले जन्म-मृत्यु के चक्र से छुटकारा पा सके।

पुनर्जन्म के विषय में सामान्य भ्रान्त धारणाएँ और 'फैशनेबल' विचार सातवें अध्याय का विषयवस्तु है, और अन्तिम अध्याय 'लौट कर मत आओ' उस प्रक्रिया का प्रस्तुतीकरण है, जिसके द्वारा आत्मा पुनर्जन्म से मुक्त हो सकता है और उन लोकों में प्रवेश कर सकता है, जहाँ अन्ततः उसे भौतिक शरीर की कारागार से मुक्ति प्राप्त हो जाती है। एक बार उस स्थिति को प्राप्त करके आत्मा जन्म, मृत्यु, जरा और व्याधि से ग्रस्त इस अन्तहीन परिवर्तनशील जगत् में कभी वापस लौट कर नहीं आता।

1
पुनर्जन्म :सुकरात से सेलिंगर तक

आत्मा के लिए कभी भी न तो जन्म हैं, न मृत्यु/ वह कभी उत्पन्न नहीं हुआ था, ण होता है और न ही होगा। वह अजन्मा है, सनातन है, सदा रहने वाला और पुरातन है। वह शरीर के मरे जाने पर मारा नहीं जाता ।

-भगवद्गीता 1.10

क्या जीवन जन्म से प्रारम्भ होता है, और मृत्यु के साथ समाप्त हो जाता है? क्या हम इसके पहले भी थे? इस प्रकार के प्रश्न सामान्यत: पूर्व के देशों के धर्मों के साथ जोड़े जाते हैं, जहाँ मनुष्य के जीवन का अस्तित्व न केवल जन्म से मृत्युपर्यन्त बल्कि लाखों युगों पर्यन्त माना जाता रहा है और जहाँ पुनर्जन्म की धारणा की स्वीकृति लगभग सर्वमान्य है। जैसा कि 19 वीं सदी के महान् जर्मन दार्शनिक आर्थर शोपेनहॉवर ने एक बार कहा था, 'यदि कोई एशियाई व्यक्ति मुझसे युरोप की परिभाषा पूछे, तो मुझे यह उत्तर देने के लिए विवश होना पड़ेगा: "यह विश्व का वह खंड है, जो इस अविश्वसनीय भ्रान्ति से ग्रस्त है कि मानव शून्य से सृजित हुआ, और यह कि उसका वर्तमान जन्म जीवन में उसका प्रथम प्रवेश है।'

दरअसल भौतिक विज्ञान ने, जो पश्चिम की प्रमुख विचारधारा है, चेतना के पूर्व-अस्तित्व और विद्यमान शरीर के पश्चात् उसकी स्थिति के विषय में किसी भी गम्भीर अथवा व्यापक रुचि का सदियों से दम घोटे रखा है। परन्तु पाश्चात्य इतिहास में सदैव ऐसे चिन्तक रहे हैं, जिन्होंने आत्मा के देहान्तरण और चेतना की अमरता को समझा और स्वीकार किया है तथा अनेक दार्शनिकों, लेखकों, कलाकारों, वैज्ञानिकों एवं राजनेताओं ने इस परिकल्पना पर गम्भीरतापूर्वक चिन्तन किया है।

प्राचीन यूनान

प्राचीन यूनानियों में सुकरात (Socrates), पाइथेगोरस और प्लेटो की गणना उनमें की जा सकती है, जिन्होंने पुनर्जन्म को अपनी शिक्षाओं का अभिन्न अंग बनाया। जीवन की अन्तिम घड़ी में सुकरात ने कहा था, 'मुझे विश्वास है कि पुनर्जन्म एक सत्य है, और यह किजीवन का आविर्भाव मृत से होता है।" पाइथेगोरस ने दावा किया था कि उसे अपने पूर्व-जन्म अभी तक याद हैं, और प्लेटो ने अपनी प्रमुख रचनाओं में पुनर्जन्म के विषय में विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किये हैं। संक्षेप में, उसका मत था कि विशुद्ध आत्मा निरपेक्ष सत्य के धरातल से विषयी इच्छा के कारण गिरता है, और तब भौतिक देह धारण करता है। पहले पतित आत्माएँ मानव-रूपों में पैदा होती हैं, जिनमें से दार्शनिक का रूप सर्वश्रेष्ठ है, जो उच्चतर ज्ञान के लिए प्रयास करता है। यदि उसका ज्ञान पूर्ण हो जाता है, तो दार्शनिक सनातन अस्तित्व को लौट सकता है। परन्तु यदि वह भौतिक विषय-वासनाओं में बुरी तरह फँस जाता है, तो वह पशु-योनियों में चला जाता है। प्लेटो का विश्वास था कि अतिभोजी पेटू और शराबी मनुष्य भावी जीवनों में गधे बन सकते हैं; हिंसक और अन्यायी लोग भेड़ियों और गिद्धों के रूपमें जन्म ले सकते हैं और सामाजिक मान्यताओं के अन्धानुगामी मधुमक्खी या चींटी बन सकते हैं। कुछ समय के पश्चात् आत्मा फिर मानव-रूप धारण करता है, और मुक्ति के लिए एक दूसरा अवसर पाता है। कुछ विद्वानों का विश्वास है कि प्लेटो एवं अन्य प्राचीन यूनानी दार्शनिकों ने पुनर्जन्म का अपना ज्ञान ओरफिज्म (Orphism) जैसे रहस्यात्मक धर्मों अथवा भारत से प्राप्त किया था।

यहूदी धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम

यहूदी धर्म और ईसाई धर्म के प्रारम्भिक इतिहास में भी सामान्य रूप से पुनर्जन्म के संकेत मिलते हैं। सम्पूर्ण कबाला (यहूदियों की मौखिक परम्परा) में अतीत और आगामी जीवनों के सम्बन्ध में सूचना मिलती है, जो अनेक हिब्रू विद्वानों के मतानुसार शास्त्रों में छिपा गुप्त ज्ञान है। जोहर में, जो कबाली के प्रमुख ग्रंथों में से एक है, कहा

गया है, 'आत्मा को परम तत्व में पुन: प्रवेश करना होगा, जहाँ से उसका आविर्भाव हुआ है। परन्तु ऐसा कर पाने के लिए उसे सभी पूर्णताओं का विकास करना होगा, जिनके बीज उनके भीतर बोए हुए हैं; और यदि उन्होंने यह अवस्था एक जीवन में प्राप्त न की, तो उन्हें दूसरा जीवन प्रारम्भ करना होगा, और तब तीसरा, और इसी तरह आगे भी तब तक, जब तक कि वे वह स्थिति प्राप्त न कर लें जो उन्हें ईश्वर के साथ पुनर्मिलन के योग्य बना दे।" वैश्विक यहूदी ज्ञानकोश के अनुसार 'हसीदी" यहूदियों का भी इसी प्रकार का विश्वास है।

दरअसल भौतिक विज्ञान ने, जो पश्चिम की प्रमुख विचारधारा है, चेतना के पूर्व-अस्तित्व और विद्यमान शरीर के पश्चात् उसकी स्थिति के विषय में किसी भी गम्भीर अथवा व्यापक रुचि का सदियों से दम घोटे रखा है। परन्तु पाश्चात्य इतिहास में सदैव ऐसे चिन्तक रहे हैं, जिन्होंने आत्मा के देहान्तरण और चेतना की अमरता को समझा और स्वीकार किया है तथा अनेक दार्शनिकों, लेखकों, कलाकारों, वैज्ञानिकों एवं राजनेताओं ने इस परिकल्पना पर गम्भीरतापूर्वक चिन्तन किया है।

प्राचीन यूनान

प्राचीन यूनानियों में सुकरात (Socrates), पाइथेगोरस और प्लेटो की गणना उनमें की जा सकती है, जिन्होंने पुनर्जन्म को अपनी शिक्षाओं का अभिन्न अंग बनाया। जीवन की अन्तिम घड़ी में सुकरात ने कहा था, 'मुझे विश्वास है कि पुनर्जन्म एक सत्य है, और यह किजीवन का आविर्भाव मृत से होता है।" पाइथेगोरस ने दावा किया था कि उसे अपने पूर्व-जन्म अभी तक याद हैं, और प्लेटो ने अपनी प्रमुख रचनाओं में पुनर्जन्म के विषय में विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किये हैं। संक्षेप में, उसका मत था कि विशुद्ध आत्मा निरपेक्ष सत्य के धरातल से विषयी इच्छा के कारण गिरता है, और तब भौतिक देह धारण करता है। पहले पतित आत्माएँ मानव-रूपों में पैदा होती हैं, जिनमें से दार्शनिक का रूप सर्वश्रेष्ठ है, जो उच्चतर ज्ञान के लिए प्रयास करता है। यदि उसका

ज्ञान पूर्ण हो जाता है, तो दार्शनिक सनातन अस्तित्व को लौट सकता है। परन्तु यदि वह भौतिक विषय-वासनाओं में बुरी तरह फँस जाता है, तो वह पशु-योनियों में चला जाता है। प्लेटो का विश्वास था कि अतिभोजी पेटू और शराबी मनुष्य भावी जीवनों में गधे बन सकते हैं; हिंसक और अन्यायी लोग भेड़ियों और गिद्धों के रूपमें जन्म ले सकते हैं और सामाजिक मान्यताओं के अन्धानुगामी मधुमक्खी या चींटी बन सकते हैं। कुछ समय के पश्चात् आत्मा फिर मानव-रूप धारण करता है, और मुक्ति के लिए एक दूसरा अवसर पाता है। कुछ विद्वानों का विश्वास है कि प्लेटो एवं अन्य प्राचीन यूनानी दार्शनिकों ने पुनर्जन्म का अपना ज्ञान ओरफिज्म (Orphism) जैसे रहस्यात्मक धर्मों अथवा भारत से प्राप्त किया था।

यहूदी धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम

यहूदी धर्म और ईसाई धर्म के प्रारम्भिक इतिहास में भी सामान्य रूप से पुनर्जन्म के संकेत मिलते हैं। सम्पूर्ण कबाला (यहूदियों की मौखिक परम्परा) में अतीत और आगामी जीवनों के सम्बन्ध में सूचना मिलती है, जो अनेक हिब्रू विद्वानों के मतानुसार शास्त्रों में छिपा गुप्त ज्ञान है। जोहर में, जो कबाली के प्रमुख ग्रंथों में से एक है, कहा गया है, 'आत्मा को परम तत्व में पुन: प्रवेश करना होगा, जहाँ से उसका आविर्भाव हुआ है। परन्तु ऐसा कर पाने के लिए उसे सभी पूर्णताओं का विकास करना होगा, जिनके बीज उनके भीतर बोए हुए हैं; और यदि उन्होंने यह अवस्था एक जीवन में प्राप्त न की, तो उन्हें दूसरा जीवन प्रारम्भ करना होगा, और तब तीसरा, और इसी तरह आगे भी तब तक, जब तक कि वे वह स्थिति प्राप्त ण कर लें जो उन्हें ईश्वर के साथ पुनर्मिलन के योग्य बना दे।'' वैश्विक यहूदी ज्ञानकोश के अनुसार 'ह्सीदी' यहूदियों का भी इसी प्रकार का विश्वास हैं।

ईसवी की तीसरी सदी में ओरिजेन नामक धर्मशास्त्री ने, जो प्रारम्भिक ईसाई-गिरजाघर के आचार्यों में से एक थे और बाइबल के अत्यन्त निष्णात विद्वान् थे, लिखा

है, 'किसी पाप-प्रवृत्ति से प्रेरित होकर कुछ विशेष आत्माएँ शरीरों में प्रवेश करती हैं- पहले, मानवशरीरों में, और तब विवेकहीन वासनाओं के सम्पर्क के कारण मानवजीवन के लिए नियत अवधि के पश्चात् वे पशुओं में बदल जाती हैं, जहाँ से वे वनस्पतियों के स्तर पर गिर जाती हैं। इस स्थिति से वे फिर उन्हीं क्रमिक स्तरों में से होती हुई उबरती हैं और अपने स्वर्गीय स्थान को पुन: प्राप्त होती हैं।"

बाइबल में ही ऐसे अनेक उद्धरण हैं, जो बताते हैं कि ईसा मसीह और उनके अनुयायी पुनर्जन्म के सिद्धान्त से परिचित थे। एक बार ईसा के शिष्यों ने ओल्ड टेस्टामेन्ट की इस भविष्यवाणी के विषय में पूछा कि एलियास पृथ्वी पर पुन: प्रकट होंगे? सन्त मैथ्यु के धर्मोपदेश में हम पढ़ते हैं, 'और ईसा ने उनको उत्तर दिया, एलियास सचमुच पहले आएँगे, और सभी वस्तुओं को पुन: प्रतिष्ठापित करेंगे। परन्तु मैं तुमको बताता हूँ कि एलियास पहले ही आ चुके हैं, और तुम उसे नहीं जानते हो तब शिष्यों की समझ में आया कि वे उनको बेप्तिस्त जॉन का वर्णन कर रहे हैं।" दूसरे शब्दों में, ईसा ने घोषणा की कि बेतिस्त जॉन, जिसका सिर हैरड ने काट लिया था, पैगम्बर एलियास का ही पुनरावतार था। एक अन्य उदाहरण में ईसा तथा उनके शिष्यों ने एक ऐसे आदमी को देखा, जो जन्म से ही अंधा था। शिष्यों ने ईसा को पूछा, 'पापी कौन है, यह आदमी या उसके मातापिता, जिससे वह अंधा जन्मा? ईसा ने उत्तर दिया, पाप भले किसी ने भी किया हो, यह भगवान् के कार्य को दिखाने का अवसर है। उसके बाद ईसा ने उस आदमी को अच्छा कर दिया। अब यदि वह आदमी अपने स्वयं के पाप के कारण अंधा जन्मा होता, तो वह पाप उसने अपने जन्म से पहले, अर्थात् अपने पूर्वजन्म में किया होगा और इस विचार के प्रति ईसा ने कोई विरोध प्रदर्शित नहीं किया।

कुरान का कथन है, 'और तुम मृत थे, तथा वे (ईश्वर) तुम्हें जीवन में वापस ले आए, और वे तुम्हें मृत्यु देंगे, और पुन: जीवित करेंगे, और अन्त में तुम्हें अपने में समेट

लेंगे।' इस्लाम केअनुयायियों में सूफी लोग विशेष रूप से विश्वास करते हैं कि मृत्यु कई क्षति नहीं होती, क्योंकि अमर आत्मा विविध शरीरों से निरंतर जाता रहता है। प्रसिद्ध सूफी कवि, जलालुद्दीन रूमी ने लिखा है :

मैं खनिज के रूप में मरा, और पोधा बन गया,
मैं पोधे के रूप में मरा, और पशु के रूप में आया,
मैं पशु के रूप में मरा, और आदमी बन गया
मैं क्यों डरु ? मृत्यु से मुझे घाटा ही कब हुआ ?

भारतवर्ष का कालातीत वेद-वाङ्मय पुष्टि करता है कि भौतिक के साथ तादात्म्य स्थापित करने के अनुसार आत्मा 84,00,000 रूपों में से एक को ग्रहण करता है और एक बार किसी विशेष योन में प्रकट होने पर नीचे से ऊपर की और क्रमिक जीव रूप में स्वयं विकसित होता रहता है और अन्त में मानव-योनि प्राप्त करता है।

इस प्रकार, पश्चिम के सभी प्रमुख धर्मों-यहूदी, ईसाई और इस्लाम-के उपदेशों के ताने-बाने में पुनर्जन्म के निश्चित सूत्र हैं, यद्यपि इन मतवादों के आधिकारिक संरक्षक इनकी अनदेखी या इनसे इनकार करते हैं।

मध्ययुग और पुनर्जागरण

ऐसी परिस्थितियों में, जो आज भी रहस्य से घिरी हुई हैं, बैजन्टाइन सम्राट् जस्टीनियन ने 553 ई. में रोमन कैथोलिक चर्च में आत्मा के पूर्व-अस्तित्व सम्बंधी उपदेशों पर रोक लगा दी थी। उस युग में चर्च के अनेक लेख नष्ट कर दिये गये, और आज अनेक विद्वानों का विश्वास है कि शास्त्रों से पुनर्जन्म के सन्दर्भ निकाल दिये गये। यद्यपि चर्च ने नॉस्टिक पन्थों (Gnostic Sects)को कठोरता से दण्डित किया, तथापि इन्होंने पश्चिम में पुनर्जन्म के सिद्धान्त कोकिसी न किसी तरह जीवित रखा। (Gnostic - यह शब्द यूनानी भाषा के शब्द Gnosis से निकला है, जिसका अर्थ है, 'ज्ञान')

पुनर्जागरण के युग में पुनर्जन्म के प्रति लोक-रुचि एक नये प्रकार से पल्लवित हुई। इस पुनरुज्जीवन के लिए नामवर लोगों में से एक था जीओरदानो ब्रनो, जो इटली का एक प्रमुख दार्शनिक और कवि था और जिसको उसके पुनर्जन्म विषयक उपदेशों के कारण अंतत: धार्मिक अदालत द्वारा चिता पर जीवित जला कर मार देने का दण्ड दे दिया गया। अपने ऊपर लगाये गये आरोपों के अन्तिम उत्तरों में उसने वह एक | हो सकता है या दूसरे शरीर में, और एक शरीर से दूसरे शरीर में देहान्तरण कर सकता है।"

चर्च के द्वारा किये गये इस प्रकार के दमन के कारण पुनर्जन्म सम्बंधी उपदेश तब गहरे रूप में भूमिगत हो गये, किन्तु वे यूरोप केगुह्य समाजों को जैसे रोसिक्रूशियनों, फ्रीमेसनों,केबालिस्टोंऔरअन्यों में बचे रहे।

नव-आलोक का युग

नव-आलोक के युग में यूरोप के बुद्धिजीवी वर्ग चर्चद्वारा लादी गई पाबंदियों से अपने आपको मुक्त करने लगे। महान् दार्शनिक वाल्टैरने लिखा कि 'पुनर्जन्म का सिद्धान्त ण तो बेहूदा हैं और उ ही व्यर्थ, " और एक बार जन्म लेने की अपेक्षा दो बार जन्म लेनाअधिक आश्चर्यजनक नहीं है।'

किसी को भी यह जानकर आश्चर्य हो सकता है कि जब इस विषय पर लोक-रूचि एटलांटिक को पर करके अमरीकापहुँची तब अमेरिका के अनेक प्रतिष्ठापक नेता पुनर्जन्म के विचार से मुग्ध हो उठे और अन्तत: उन्होंने उसे स्वीकार कर लिया। अपना दृढ़ विश्वास प्रकट करते हुए बेंजामिन फ्रेंकलिन ने लिखा, 'इस संसार में अपना अस्तित्व पाकर, मैं विश्वास करता हूँ कि मैं किसी न किसी रूप में सदा रहूँगा।'

सन् 1814 में, भूतपूर्व अमरीकी राष्ट्रपति जॉन एडेम्स ने, जो हिन्दू-धार्मिक किताबों का अध्ययन किया करते थे, एक अन्य भूतपूर्व राष्ट्रपति, 'मॉन्टीसेलो के सन्त,' थॉमस जेफरसन को पुनर्जन्म के सिद्धान्त के विषय में लिखा था। एडम्स ने लिखा,

'परम प्रभु के विरुद्ध विद्रोह करने पर कुछ आत्माएँ घोर अन्धकार के गर्त में डाल दी गई थीं। इसके बाद उनको कारागार से मुक्त किया गया, और उन्हें पृथ्वी पर आने की और अपने-अपने पद और चरित्र के अनुरूप विभिन्न प्रकार के पशुओं, सरीसृपों, पक्षियों, हिंसक प्राणियों और मनुष्यों के रूप में, यहाँ तक कि वनस्पतियों और खनिजों में भी अपनी परीवेक्षण अवधि पूरी करने के लिए देहान्तरण की अनुमति दे दी गई। यदि वे अपने को दूषित किये बिना सभी परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर सकें, तो उन्हें गाय और आदमी होने की अनुमति दे दी गई। यदि मनुष्य के रूप में उनका व्यवहार अच्छा रहा.तो उन्हें स्वर्ग में उनके मूल पद और सुख को वापस लौटा दिया गया।'

यूरोप में नेपोलियन अपने सेनापतियों से यह कहने में बहुत रुचि लेता था कि पूर्वजन्म में वह महान् सम्राट् चार्ल्स था। जर्मनी के महानतम कवियों में से एक, जोहान वोल्फगंग वॉन गोइथे का भी पुनर्जन्म में विश्वास था, और सम्भव है कि यह विचार उसे भारतीय दर्शन के अध्ययन से मिला हो। नाटककार और वैज्ञानिक के रूप में विख्यात गोइथे ने भी एक बार कहा था, 'मुझे विश्वास है कि मैं सहस्रों बार यहाँ पहले रह चुका हूँ जैसा कि इस समय हूँ, और मैं सहस्रों बार यहाँ लौटने की आशा करता हूँ।"

अध्यात्मवाद

इमर्सन, व्हिटमन और थोरो सहित अमरीकी अध्यात्मवादियों को भी भारतीय दर्शन एवं पुनर्जन्म में तीव्र रुचि थी। इमर्सन ने लिखा हैविश्व का यह एक रहस्य है कि यहाँ सभी वस्तुएँ स्थिर रहती हैं और मरती नहीं, परन्तु कुछ समय के लिए आँखों से ओझल हो जाती हैं और बाद में फिर से लौट आती हैं. मरता कुछ भी नहीं। मनुष्य मरने का बहाना करते हैं, बनावटी अन्त्येष्टि और शोकपूर्ण मरण-समाचारों को सह लेते हैं, और वे भले-चंगे, किसी नये विचित्र छद्म-वेश में खड़े अपनी खिड़की से बाहर झाँकते हैं।" इमर्सन ने अपने पुस्तकालय की अनेक प्राचीन भारतीय दर्शन की पुस्तकों

में से एक, कठोपनिषद् से उद्धृत किया है, 'आत्मा जन्म नहीं लेता, यह मरता भी नहीं है, न यह किसी से उत्पन्न हुआ अजन्मा है, सनातन है, यह मारा नहीं जाता है, यद्यपि शरीर मारा जाता है।"

वाल्डैन पौंड के दार्शनिक थोरो ने लिखा है,'मैं जहाँ तक पीछे याद कर सकता हूँ, मैंने किसी पूर्व-अस्तित्व के अनुभवों को अनजाने ही सन्दर्भित किया है।"1926 ई. में खोजी गई "The Transmigration of the Seven Brahmans" (सात ब्राह्मणों का पुनर्जन्म), नामक एक पांडुलिपि से पुनर्जन्म में थोरो की गहरी रुचि का पता चलता है। यह छोटी पुस्तक प्राचीन संस्कृत इतिहास से पुनर्जन्म की एक कहानी का अंग्रेजी अनुवाद है। देहान्तरण की घटना का सम्बंध उन सात ऋषियों के जीवन से है जिन्होंने शिकारियों, राजकुमारों और पशुओं के रूप में उत्तरोतर ग्रहण किया था।

और वॉल्ट व्हिटमन अपनी कविता "Song of Myself (सोंग ऑफ़ मायसल्फ) में लिखते हैं :

मैंजानताहूँ, मैं अमर्त्य हूँ ...
हमने अभी तक बितायी हैं
खराबों शीत औरग्रीष्म ऋतुएँ,
खरबों अभी आगे आने को हैं, और
खरबों उनके भी आगे आने को हैं, और
खरबों उनके भी आगे आने को हैं।

फ्रांस के प्रसिद्ध लेखक ओनोरे बालजैक ने पुनर्जन्म के विषय पर एक पूरा उपन्यास 'Seraphita' (सेरफिता) लिखा है, जिसमें बालजैक कहता है, 'सभी मनुष्य एक पूर्व-जीवन से गुजरते हैंकौन जानता है कि स्वर्ग के उत्तराधिकारी को कितने मांसल रूपों को धारण करने पड़ें कि इसके पहले वह शान्ति एवं एकान्त के उस मूल्य

को समझ सके, जिसके तारों से आलोकित मैदान आध्यात्मिक विश्वों के झरोखे मात्र हैं।'

डेविड कॉपरफील्ड में, चार्ल्स डिकेन्स ने पूर्व-जन्मों ('पहले कहीं देखा है'-deja-Vu) की स्मृतियों पर आधारित एक अनुभव की छानबीन की, 'हम सभी को एक अनुभव का एहसास होता है, जो समय-समय पर हम सभी को अभिभूत करता है, कि हम जो कुछ कह रहे और कर रहे हैं, वह किसी दूर अतीत में पहले कहा और किया जा चुका है-कि हम सभी, युगों पूर्व, उन्हीं चेहरों, वस्तुओं और परिस्थितियों से घिरे रह चुके हैं."

और रूस में, विख्यात काउन्ट लियो टॉल्सटॉय ने लिखा, 'जिस प्रकार हम अपने वर्तमान जीवन में सहस्रों स्वप्नों के बीच रहते हैं, वैसे ही हमारा वर्तमान जीवन कई सहस्रों जीवनों में से केवल एक है जिसमें हम एक अन्य, अधिक सत्य जीवन से प्रवेश करते हैं.और तब मृत्यु के बाद वापस लौट जाते हैं। हमारा जीवन उस अधिक सत्य जीवन के स्वप्नों में से केवल एक है, और इसलिए यह अनन्त प्रक्रिया उस अन्त तक, उस सत्य जीवन, ईश्वरीय जीवन में पहुँचने तक चलती रहती है।"

आधुनिक युग

जैसे ही हम बीसवीं सदी में प्रवेश करते हैं, हम देखते हैं कि पुनर्जन्म के विचार ने पश्चिम के अत्यन्त प्रभावी कलाकारों में से एक, पॉल गौगान को आकृष्ट किया, जिसने ताहिती (प्रशांत महासागर में स्थित एक द्वीप) में अपने अन्तिम दिनों में लिखा कि जब भौतिक शरीर-संरचना विखंडित हो जाती है, 'आत्मा जीवित रहता है।' और तब वह 'पाप और पुण्य के अनुसार नीचे गिरते हुए अथवा ऊपर उठते हुए दूसरा शरीर धारण करता है।" इस कलाकार का विश्वास था कि सतत पुनर्जन्म का विचार पश्चिम को सबसे पहले पाइथेगोरस ने सिखाया, जिसने इसे प्राचीन भारत के ऋषियों से सीखा था।

अमरीका के मोटर-कार उद्योग के समृद्ध उद्योगपति हेनरी फोर्ड ने एक बार किसी समाचार-पत्र के संवाददाता को भेंट में कहा था, 'जब मैं छब्बीस साल का था, तब मैंने पुनर्जन्म के सिद्धान्त को स्वीकार किया था।"फोर्ड ने बताया, 'विलक्षण प्रतिभा एक अनुभव है। कुछ लोग सोचते हैं कि यह एक ईश्वर प्रदत्त उपहार या क्षमता है, परन्तु यह अनेक जन्मों में संसिद्ध अनुभवों का फल है।' इसी प्रकार, अमरीकी सेनापति जॉर्ज एस. पैटन का विश्वास था कि उसने अपने सैन्य कौशलों को पुरातन युद्ध-क्षेत्रों से प्राप्त किया था।

आयरलैंड के उपन्यासकार और कवि जेम्स जॉयस की कृति, यूलीसिस में पुनर्जन्म बारम्बार दोहराये जाने वाला विषय है। इस उपन्यास के एक प्रसिद्ध प्रकरण में जॉयस का नायक, श्रीमान् ब्लूम, अपनी पत्नी से कहता है, 'कुछ लोगों का विश्वास है कि हम मृत्यु के बाद एक दूसरे शरीर में जीवित रहते हैं, जिसमें हम पहले भी जिये थे। वे इसे पुनर्जन्म कहते हैं। हम सब सहस्त्रों वर्ष पूर्व पृथ्वी पर अथवा किसी अन्य ग्रह पर रहते थे। वे कहते हैं कि हम सब इसे भूल गये हैं। कुछ कहते हैं कि उन्हें अपने पूर्व जन्मों की याद है।"

जैक लंडन ने पुनर्जन्म को अपने उपन्यास दि स्टार रोवर का प्रमुख विषय बनाया, जिसका प्रमुख पात्र कहता है, 'मैंने अपना जीवन तभी प्रारम्भ नहीं किया जब मैंने जन्म लिया, न ही जब मैंने गर्भ में प्रवेश किया। मैं अनेक, असंख्य युगों में बढ़ता और विकसित होता रहा हूँ..मेरी सारी पूर्व-आत्माओं की ध्वनियाँ प्रतिध्वनियाँ और प्रेरणाएँ मुझ में हैं ओह, मैं असंख्य बार पुनः पैदा होऊँगा, तब भी मेरे इर्द-गिर्द के मूर्ख लोग सोचते हैं कि एक रस्सी से मेरा गला घोट कर वे मेरा अन्त कर देंगे।'

आध्यात्मिक सत्य की खोज विषयक अपने उत्कृष्ट श्रेणी के उपन्यास, 'सिद्धार्थ' में नोबेल पुरस्कार विजेता हरमन हेस ने लिखा, 'उसने इन सब रूपों और चेहरों को सहस्त्रों सम्बंधों में परस्पर बंधे हुए देखा उनमें से कोई नहीं मरा, वे केवल बदल गये,

सदा जन्मते रहे; निरन्तर उन्हें नया चेहरा मिलता रहा; केवल काल ही था जो एक चेहरे और दूसरे चेहरे के बीच खड़ा था।"

अनेक वैज्ञानिकों और मनोवेताओं का भी पुनर्जन्म में विश्वास रहा है। महानतम् आधुनिक मनोवैज्ञानिकों में से एक काल जंग ने स्व तथा चेतना के गूढ़तम् रहस्यों को समझने के लिए अनेक जन्म लेने वाले शाश्वत आत्मा के विचार का साधन के रूप में उपयोग किया। जंग ने कहा, 'मैं अच्छी तरह कल्पना कर सकता हूँ कि मैं विगत शताब्दियों में जीवित रहा हूँगा और वहाँ मैंने उन प्रश्नों का सामना किया होगा जिनका उत्तर मैं तब नहीं दे सका था, जिससे मुझे फिर जन्म लेना पड़ा क्योंकि मैं उस काम को पूरा नहीं कर सका जो मुझे सौंपा गया था।"

ब्रिटिश जीवविज्ञानी, थॉमस हक्सले ने बताया कि, “देहान्तरण का सिद्धान्त' मनुष्य को ब्रह्माण्ड की कार्यपद्धति को समुचित रूप से समझाने वाला युक्तिसंगत साधन है। उसने चेतावनी दी : केवल वे हीजो जल्दबाजी से विचार करते हैं, इसे अन्तर्निहित तर्कहीनता के आधार पर अस्वीकृत करेंगे।”

मिसिंग पेजन. 12

पद्धति के केन्द्रबिन्दु तक जाता है। उसने लिखा है, “हमें इसका सामना करना चाहिए : कोई भी विवेकी व्यक्ति अपने ही अन्दर अपने अस्तित्व को यह माने बिना कि वह सदैव जीवित था और सदैव जीवित रहेगा, देख नहीं सकता।” ।

आधुनिक युग के अग्रणी राजनेता और अहिंसा के दूत, महात्मा गाँधी ने एक बार बताया था कि किस प्रकार पुनर्जन्म की व्यावहारिक समझदारी ने उन्हें विश्व-शान्ति के स्वप्न को पूर्ण करने के लिए आशा प्रदान की थी। गाँधी ने कहा था, 'मैं एक मनुष्य और दूसरे मनुष्य के बीच स्थायी शत्रुता की बात नहीं सोच सकता, और क्योंकि मैं जीवित हूँ कि यदि इस जन्म में नहीं तो किसी दूसरे जन्म में मैं समूची मानवता का मैत्रीपूर्वक गले लगा सकूंगा।"

अपनी सुप्रसिद्ध लघु कथाओं में से एक में जे.डी. सेलिंगर'टेडी" को लाता है, जो समय से पूर्व परिपक्व, युवा बालक है, जो अपने पूर्व-जन्मों के अनुभवों को याद करता है, और उनके बारे में बिना झिझक बातें करता है।'इतनी मूर्खता लगती है यह। बात सिर्फ इतनी सी है कि जब आप मरते हैं, तो केवल अपने शरीर से बाहर निकल जाते हैं। भगवान् की कसम! हममें से प्रत्येक ने हजारों बार यह किया है। चूँकि उन्हें याद नहीं है, इसलिए इसका यह मतलब नहीं निकाला जा सकता कि उन्होंने ऐसा किया नहीं।"

जोनाथन लिविंस्टन सीगल, इसी नाम के उपन्यास के नायक कावर्णन इसके रचयिता रिचर्ड बाख ने इस प्रकार किया है, 'वह तेजस्वी सूक्ष्म ज्वाला जो हम सबके भीतर जलती है" अनेक पुनर्जन्मों की श्रृंखला से गुजरती है, जो उसे पृथ्वी से स्वर्ग-लोक तक ले जाती है, और फिर वापस ले आती है, जिससे वह कम भाग्यशाली व्यक्तियों को प्रकाश दे सके। जोनाथन के गुरुओं में से एक पूछता है, 'पहली बार यह विचार करने से पूर्व कि जीवन में खाने, लड़ने अथवा समूह में धाक जमाने से बढ़कर भी कुछ है, क्या आपने कभी यह सोचा है कि हम कितने जीवनों से गुजर चुके होंगे? एक हजार जीवन, जोन, दस हजार! और तब दूसरे सौ जीवन, जब तक हम यह सीखना प्रारम्भ नहीं करते कि पूर्णता नाम की कोई वस्तु है, और पुन: सौजीवन जिससे हम यह विचार पा सकें कि जीवन का उद्देश्य पूर्णता की उपलब्धि पाना, और उसे प्रकट करना है।'

नोबेल पुरुस्कार विजेता इसाक बेसेविस सिंगर पूर्व-जन्मों, पुनर्जन्म और आत्मा की अमरता की बातें अपनी अनुपम लघु कहानियों में अक्सर करता है। 'मृत्यु होती ही नहीं। यदि प्रत्येक वस्तु ईश्वर का ही अंश है, तो मृत्यु हो ही कैसे सकती है? आत्मा तो कभी नहीं मरता, और शरीर कभी सचमुच जीवित होता ही नहीं है।'

अंग्रेज राजकवि जॉन मेसफील्ड गत और भावी जीवनों के विषय में अपनी विख्यात कविता में लिखता है

मेरा मत हैं कि जब कोई आदमी मरता हैं
उसका आत्मा पुनः पृथ्वी पर लौटता हैं;
किसीनये मांसल छध-वेश में सजकर
कोई दूसरी माँ उसे जन्म देती हैं,
दृढतर अंगो और अधिक चेतन मस्तिस्क के साथ
वही पुरातन आत्मा मार्ग पर पुनः अग्रसर हो जाता हैं।

संगीतकार, गीतकार और जाने-माने भूतपूर्व बीटल जार्ज हेरीसनका पुनर्जन्म विषयक गंभीर चिन्तन परस्पर मानव-सम्बंधों पर उसके निजी विचारों में प्रकट होता है। 'मित्र वे आत्माएँ हैं जो दूसरे जीवनों में हमारे परिचित रहे हैं तथा हम एक दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं। मित्रों के बारे में मैं यही अनुभव करता हूँ। यदि मैंने एक दिन के लिए भी उन्हें जाना हो, तो कोई बात नहीं। मैं उन्हें दो वर्षों तक जानने के लिए प्रतीक्षा नहीं करूंगा, क्योंकि किसी न किसी तरह, हम पहले कहीं न कहीं अवश्य मिल चुके होंगे।"

पश्चिम में सामान्य जनता और बुद्धिजीवियों का ध्यान एक बार फिर पुनर्जन्म की ओर आकर्षित हो रहा है। फिल्में, उपन्यास, लोकप्रिय गीत और पत्रिकाओं में अब पुनर्जन्म की चर्चा बार-बार होती है तथा यह चर्चा निरन्तर बढ़ रही है। लाखों पश्चिमी लोग, जिनकी संख्या डेढ़ अरब से भी अधिक है, उन लोगों की श्रेणी में तेजी से आ रहे हैं, जिनमें हिन्दू, बौद्ध, ताओवादी एवं अन्य धर्मावलम्बी सम्मिलित हैं, जो परम्परा से यह मानते आये हैं कि जीवन जन्म के साथ प्रारम्भ नहीं होता, अथवा मृत्यु के साथ उसका अन्त नहीं हो जाता। परन्तु साधारण जिज्ञासा अथवा विश्वास पर्याप्त

नहीं है। पुनर्जन्म के विज्ञान को पूरी तरह समझने की दिशा में यह पहला चरण मात्र है, जिसमें दु:खमय जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्त होने की विधि का ज्ञान शामिल है।

भगवद्गीता : पुनर्जन्म पर कालातीत स्त्रोत-ग्रन्थ

बहुत से पश्चिमी लोग पुनर्जन्म को और अधिक गहराई से समझने के उद्देश्य से गत और भावी जीवनों के ज्ञान के मूल स्त्रोतों की ओर उन्मुख हो रहे हैं। सम्प्रति उपलब्ध सभी साहित्यों में भारतवर्ष केसंस्कृत भाषा में रचित वेद पृथ्वी पर सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं, और पुनर्जन्म विज्ञान की सम्पूर्ण और तार्किक व्याख्या प्रस्तुत करते हैं- वे शिक्षाएँ जिन्होंने पाँच सहस्त्र से भी अधिक वर्षों से अपने सार्वलौकिक प्रभाव और व्यावहारिकता को बनाये रखा है।

जो वैदिक ज्ञान और उपनिषदों का सार है, उस भगवद्गीता में पुनर्जन्म विषयक अत्यन्त मौलिक जानकारी मिलती है। पचास शताब्दी पूर्व पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने मित्र एवं शिष्य अर्जुन को उत्तरी भारत के एक रणक्षेत्र में गीता का उपदेश दिया था। पुनर्जन्म पर विवेचन के लिए युद्ध-भूमि आदर्श स्थान होती है, क्योंकि मनुष्य युद्ध में होने के कारण जीवन, मृत्यु और जीवनेतर सम्बंधी निर्णायक प्रश्नों का सीधा सामना करता है।

जैसे ही श्रीकृष्ण आत्मा की अमरता के बारे में बोलना प्रारम्भ करते हैं, वे अर्जुन से कहते हैं, 'कभी भी ऐसा समय नहीं था, जब मैं नहीं था, तुम न थे, न ये सब राजा थे, और न ही भविष्य में हममें से किसी का होना रुक जायेगा।" गीता आगे निर्देश देती है, 'यह जान लो कि जो इस समूचे शरीर में व्याप्त है, वह अविनाशी है। उस अविनाशी आत्मा का कोई भी विनाश नहीं कर सकता।" आत्मा, जिसकी चर्चा हम यहाँ कर रहे हैं, इतना सूक्ष्म है कि यह सीमित मानव-बुद्धि और इन्द्रियों से तुरन्त इसकी सत्यता सिद्ध कर पाने योग्य नहीं है। अतएव हर मनुष्य आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार नहीं कर पाएगा। श्रीकृष्ण अर्जुन को बताते हैं, 'कुछ लोग आत्मा को आश्चर्यवत् देखते हैं,

कुछ लोग इसका आश्चर्यवत् रूप में वर्णन करते हैं, कुछ इसे आश्चर्यवत् रूप में सुनते हैं, अन्य लोग इसके विषय में सुनने के बाद भी बिल्कुल नहीं समझ पाते।"

आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करना मात्र श्रद्धा की बात नहीं है। भगवद्गीता हमारी इन्द्रियों और तर्क के साक्ष्य पर विचार करनेको प्रेरित करती है, जिससे हम इसकी शिक्षाओं को विवेकपूर्ण विश्वास की कतिपय मात्रा के साथ स्वीकार कर सकें, न कि आँख मूंद कर असंगत मतवाद के रूप में।

पुनर्जन्म को तब तक समझ पाना असम्भव है, जब तक हम वास्तविक 'स्व' (आत्मा) और शरीर में भेद को नहीं जानते। गीता नीचे दिए गये उदाहरण के द्वारा हमें आत्मा के स्वरूप को समझने में सहायता करती है-'जैसे अकेला सूर्य समूचे ब्रह्मांण्ड को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार शरीरस्थ जीवात्मा चेतना के द्वारा समूचे शरीर को प्रकाशित करता है।'

शरीर में आत्मा की उपस्थिति के लिए चेतना ठोस साक्ष्य है। मेघों से आच्छादित दिन में सूर्य भले ही दिखाई न पड़े, परन्तु उसके प्रकाश की उपस्थिति के कारण हम जानते हैं कि वह आकाश में है। इसी प्रकार हम आत्मा का सीधा साक्षात्कार भले ही न कर सकें, किन्तु चेतना की उपस्थिति से हम निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि वह (आत्मा) वहाँ है। चेतना के न होने पर शरीर मात्र निजीव पदार्थ का पिण्ड रह जाता है। केवल चेतना की उपस्थिति से ही निजीव पदार्थ के इस पिण्ड में श्वास लेने, बोलने, प्रेम करने और डरने की क्रिया का संचार होता है। सार यह है कि शरीर आत्मा का वाहन है, जिसके द्वारा वह अपनी असंख्य भौतिक इच्छाओं की पूर्ति कर सकता है। गीता बताती है कि जीवात्मा शरीर में 'भौतिक शक्ति से निर्मित यंत्र पर स्थित है।' आत्मा मिथ्या ही शरीर के साथ पहचान कर लेता है और जीवन की विविध धारणाओं को एक शरीर से दूसरे शरीर तक ठीक उसी प्रकार ले जाता है, जैसे वायु सुगन्ध को ले जाती है। जिस

प्रकार चालक के बिना कोई मोटरगाड़ी नहीं चल सकती, उसी प्रकार भौतिक देह आत्मा की उपस्थिति के बिना काम नहीं कर सकती।

ज्यों-ज्यों आदमी की आयु बढ़ती है, त्यों-त्यों चेतन आत्मा औरभौतिक शरीर का भेद अधिक स्पष्ट होने लगता है। अपने जीवन-काल में, व्यक्ति अनुभव कर सकता है कि उसका शरीर निरन्तर बदल रहा है। वह टिकता नहीं, और समय यह सिद्ध कर देता है कि बालक स्वल्पायु है। शरीर किसी काल-विशेष में अस्तित्व में आता है, बढ़ता है, परिपक्व होता है, सन्तान पैदा करता है, और शनै: शनै: क्षीण होता है और मर जाता है। इस प्रकार भौतिक शरीर मिथ्या है, क्योंकि वह नियत समय पर नष्ट हो जाएगा। जैसे गीता व्याख्या करती है, 'असत् का अस्तित्व नहीं होता।" परन्तु भौतिक शरीर के इन परिवर्तनों के बावजूद, चेतना, जो अन्तस्थ आत्मा का परिचायक चिह्न है, नहीं बदलती। ('सत् में कभी परिवर्तन नहीं होता।") इसलिए, हम यह तर्कसंगत निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि चेतना में स्थायित्व का सहज गुण है, जिससे वह शरीर के नष्ट होने पर जीवित रह सकती है। श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं, 'आत्मा के लिए किसी समय भी न तो जन्म है, न मृत्यु शरीर के मारे जाने पर वह मारा नहीं जाता।"

किन्तु यदि आत्मा 'शरीर के मारे जाने पर नहीं मारा जाता," तब उसका होता क्या है? भगवद्गीता में उत्तर दिया गया है कि आत्मा दूसरे शरीर में प्रवेश करता है। यही पुनर्जन्म है। कुछ लोगों के लिए इस अवधारणा को स्वीकार करना कठिन हो सकता है, किन्तु यह प्राकृतिक प्रक्रिया है और गीता हमें इस धारणा को समझने में सहायता के लिए तर्कसंगत उदाहरण देती है: 'जिस प्रकार शरीरस्थ आत्मा इस शरीर में बचपन से यौवन में, और यौवन से बुढ़ापे में निरन्तर आगे बढ़ता रहता है, उसी प्रकार मृत्यु हो जाने पर वह किसी दूसरे शरीर में प्रवेश पाता है। धीर व्यक्ति इस परिवर्तन से भ्रमित नहीं होता।"

दूसरे शब्दों में, मनुष्य एक जीवन-काल में भी पुनर्जन्म ग्रहण करता है। कोई भी जीवविज्ञानी बता सकता है कि शरीर की कोशिकाएँ निरन्तर मरती रहती हैं और नई कोशिकाएँ उनका स्थानलेती रहती हैं। दूसरे शब्दों में, हममें से प्रत्येक व्यक्ति इसी जीवन में कई विविध शरीर धारण करता है। किसी वयस्क का शरीर उसके अपने ही शिशु-शरीर से पूरी तरह भिन्न होता है, तथापि शारीरिक परिवर्तनों के बावजूद अन्तस्थ पुरुष वही बना रहता है। लगभग ऐसा ही मृत्यु के समय होता है, जब आत्मा शरीर के अन्तिम परिवर्तन को प्राप्त करता है। गीता कहती है, 'जिस प्रकार व्यक्ति अपने पुराने वस्त्रों को उतार कर नये वस्त्र धारण करता है, उसी प्रकार आत्मा जीर्ण और निरर्थक शरीर को त्याग कर नए भौतिक शरीर ग्रहण करता है।" इस प्रकार आत्मा जन्म और मृत्यु के अन्तहीन चक्र में उलझा रहता है। भगवान् अर्जुन से कहते हैं, 'जिसने जन्म ग्रहण किया है, उसकी मृत्यु सुनिश्चित है, और मरने के पश्चात् उसका जन्म निश्चित है।"

वेदों के अनुसार जीवों की 8400,000योनियाँ हैं। अणु-जीवों से प्रारम्भ होकर मत्स्य, वनस्पति, कीट, सरीसृप, पक्षियों एवं पशुओं भौतिक इच्छाओं के अनुसार इन योनियों में निरन्तर जन्म लेती रहती हैं।

मन वह यंत्र है जो देहान्तरण का नियंत्रण करता है और नवीन तथा नवीनतर शरीरों की ओर आत्मा को प्रेरित करता है। गीता व्याख्या करती है, 'जिस भाव का स्मरण करता हुआ मनुष्य शरीर को त्यागता है, उसी भाव को वह निश्चित रूप से [अपने अगले जीवन में] प्राप्त होगा।" जो कुछ भी हमने जीवन भर सोचा और किया है, उसका प्रभाव मन पर पड़ता है, और इन प्रभावों का समुच्चय मृत्यु के समय हमारे अन्तिम विचारों को प्रभावित करता है। इन विचारों की गुणवत्ता के अनुरूप भौतिक प्रकृति हमें उपयुक्त शरीर देती है। इसलिए, जो शरीर हमें अभी प्राप्त है, वह हमारी पिछली मृत्यु के समय की चेतना की अभिव्यक्ति है।

“इस प्रकार जीवात्मा नये स्थूल शरीर को ग्रहण करता है, जिससे वह विशेष प्रकार की आँख, कान, जीभ, नाक और त्वचा प्राप्त करताहै, जो मन के साथ जुड़े होते हैं। इस प्रकार वह किन्हीं विशिष्ट इन्द्रिय-भोगों को भोगता है," यह गीता की व्याख्या है। इसके साथ ही पुनर्जन्म का मार्ग मनुष्य को सदैव ऊपर की ओर नहीं ले जाता। यह निश्चित नहीं है कि कोई मनुष्य अगले जीवन में मनुष्य-जन्म को ही प्राप्त करे। उदाहरणार्थ, यदि कोई व्यक्ति कुत्ते की मानसिकता को लेकर मरता है, तब वह अगले जन्म में कुत्ते की ही आँखें, कान, नाक, इत्यादि प्राप्त करेगा और इस प्रकार वह कुत्ते को उपलब्ध विशिष्ट सुख भोग सकेगा। भगवान् श्रीकृष्ण ऐसे अभागे आत्मा की नियति की पुष्टि यह कहते हुए करते हैं कि 'यदि कोई तामसिक मन:स्थिति में मरता है, तो वह पशु-योनि में जन्म लेता है।”

भगवद्गीता के अनुसार, वे मानव जो अपने अभौतिक, उच्च स्वरूप के विषय में जिज्ञासा नहीं करते, उन्हें कर्म-विधान के वशीभूत होकर कभी मानव-रूपों में, कभी पशु-रूपों में तो कभी वनस्पति अथवा कृमि-रूपों में जन्म, मृत्यु तथा पुनर्जन्म के चक्र में पड़े रहने को बाध्य होना पड़ता है।

भौतिक संसार में हमारा अस्तित्व इस जन्म और पूर्व-जन्मों की नानाविध कर्मिक प्रतिक्रियाओं का परिणाम है। मानव-शरीर ही एकमात्र बचाव का मार्ग है जिससे भौतिकता में बँधा हुआ आत्मा बच निकल सकता है। मानव-रूप का समुचित उपयोग करके जीवन की सभी समस्याओं (जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि) का समाधान किया जा सकता है और पुनर्जन्म का अन्तहीन चक्र तोड़ा जा सकता है। किन्तु, यदि आत्मा मानव-धरातल तक विकास करके केवल इन्द्रियसुखों के कार्यकलापों में व्यस्त रहकर जीवन को नष्ट करता है, तो वह इसी वर्तमान जीवन में आसानी से इतने कर्म संचित कर लेता है कि वह आगामी सहस्त्रों वर्षों तक जन्म-मृत्यु के चक्र में फैसा रहे। और पका नहीं कि ये सभी जन्म मनुष्य के रूप में हों।

भगवान् कृष्ण कहते हैं, 'मूर्ख लोग यह नहीं समझ सकते कि जीवात्मा इस शरीर से कैसे छुटकारा पा सकता है, न ही वे यह समझ पाते हैं कि प्रकृति के गुणों से सम्मोहित रह कर वह किस प्रकार के शरीर का भोग करता है। परन्तु वह, जिसकी आँखें ज्ञान में दक्ष हो चुकी हैं, यह सब देख सकता है। अभ्यास करने वाले अध्यात्मवादी, जो आत्म-साक्षात्कार में स्थित हैं, यह सब स्पष्ट देख सकते हैं। परन्तु जिनके मन का विकास नहीं हुआ है और जो आत्म-साक्षात्कार में स्थित नहीं हैं, वे जो कुछ घट रहा है, उसे प्रयास करने पर भी देख नहीं सकते।'

मानव-शरीर को प्राप्त भाग्यशाली आत्मा के लिए उचित है कि वह पुनर्जन्म के सिद्धान्तों को समझने के लिए और जन्म-मृत्यु की पुनरावृत्ति से मुक्त होने के लिए, आत्म-साक्षात्कार के प्रति गम्भीरता से प्रयत्न करे। ऐसा न करना हमारे लिए श्रेयकर नहीं है।

2
शरीरों का परिवर्तन

सन 197 4 में, पश्चिमी जर्मनी में फ्रेंकफर्ट के समीप ग्रामीण क्षेत्र में स्थित इस्कॉनकेन्द्र पर कृष्णकृपामूर्ति श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद का प्रोफेसर कार्लफ्रीड ग्राफ वॉनडयुर्कहाईम के साथ निम्नलिखित वार्तालाप हुआ। प्रो. डयुर्कहाईम, एक विख्यात धर्म-मनोविज्ञानी और "डेली लाइफ ऐज स्पिरिच्युल एक्सरसाइज" (Daily Life as Spiritual Exercise) केप्रणेता, विश्लेषण-मनोविज्ञान में पीएच. डी. उपधिकारीहैं और वे चेतनाशक्ति के मनोविज्ञान के बारे में पश्चिमी तथा पूर्वी, दोनोंपद्धतियों पर आधारित बवेरिया में एक उपचारfo|ky; कीस्थापना के लिए प्रसिद्ध हैं। इस वार्तालाप में श्रील प्रभुपाद के प्रथम और आधारभूतekSfydसिद्धान्त का विवेचन करते हैं– आध्यात्मिकजीव भौतिक शरीर से भिन्न हैं। चेतन आत्मा और शरीर दोनों अलग-अलग हैं – इस अनुस्थापन के पश्चात्श्रील प्रभुपाद बताते हैं कि चेतनपुरुष अथवा आत्मा मृत्यु के समय किस प्रकार दूसरे शरीर में निरन्तर देहांतरण करता रहता हैं।

प्रो. डयुर्कहाईम : अपने काम में मैंने पाया है कि स्वाभाविक अहं मरना नहीं चाहता। परन्तु यदि आप यह अनुभव करें[आसन्न-मृत्यु का अनुभव] तो ऐसा लगता है कि आप मृत्यु की दहलीज को पार करके एक बिल्कुल भिन्न वास्तविकता में चले जाते हैं ।

श्रील प्रभुपाद : हाँ यह भिन्न होती है। यह अनुभव एक रोगग्रस्त मनुष्य के पुन: स्वास्थ्य लाभ करने जैसा होता है।

प्रो. डयुर्कहाईम : तो, इस तरह जो व्यक्ति मर जाता है, वह वास्तविकता के किसी उच्चतर स्तर का अनुभव करता है?

श्रील प्रभुपाद : जो मरा है, वह व्यक्ति नहीं है, लेकिन शरीर है। माइक्रोफोन धातु से बना होता है। जब माइक्रोफोन में से विद्युत-ऊर्जा गुजरती है, तो वह ध्वनि को विद्युत तरंगों में परिवर्तित कर देता है, परन्तु जब उस यंत्र-व्यवस्था में विद्युत नहीं

होती, तो कुछ भी नहीं नघननननन एक धातु प्लास्टिक इत्यादि से बने एक संघटन से ज्यादा कुछ नहीं रह जाता है। इसी तरह मानव-शरीर भीतरी जीवन्त शक्ति के कारण काम करता रहता है। जब यह जीवन शक्ति शरीर छोड़ देती हैं तब कहा जाता है कि शरीर मर गया। परन्तु वस्तुत: वह तो सदैव है। जीवन्त शक्ति ही महत्वपूर्ण तत्व है। इसकी उपस्थिति ही उसे जीवित होने का आभास देती है। परन्तु 'जीवित" हो या 'मृत," भौतिक शरीर जड़ पदार्थों के एक ढेर से अधिक कुछ नहीं है।

गीता का पहला उपदेश (2.11) स्पष्ट करता है कि भौतिक शरीर की स्थिति अन्ततः बहुत महत्वपूर्ण नहीं होती।

* Կsi/a/a7gqոg*/

'ग्रßଓଞ୍ଜनif ।पिढ।।।

मिसिंग पेज न. 12

के लिए शोक कर रहे हो, जो शोक करने योग्य नहीं हैं हैं, वे न तो जीवितों के लिए और न मृतकों के लिए विलाप करते हैं। मृत शरीर दार्शनिक जिज्ञासा का वास्तविक विषय नहीं होता। बल्कि, हमारा चिन्तन सक्रिय सिद्धान्त के विषय में होना चाहिए--वह सिद्धान्त जो इस मृत शरीर को चलाता है-अर्थात् आत्मा।

प्रो. डयुर्कहाईम : आप अपने शिष्यों को किस प्रकार उस शक्ति को जानने के बारे में शिक्षा देते हैं, जो पदार्थ नहीं है, परन्तु जो पदार्थ को जीवित जैसा प्रतिभासित करती है? बौद्धिक रूप से मैं स्वीकार करता हूँ कि आप एक ऐसे दर्शन की बात कर रहे हैं, जिसमें सत्य है। मुझे इसमें सन्देह नहीं। परन्तु आप किसी को इसकी अनुभूति कैसे कराते हैं?

आत्मा की प्रतीति कैसे हो?

श्रील प्रभुपाद : यह तो बहुत सरल बात है। एक सक्रिय तत्व है जो शरीर को चलाता है; जब वह नहीं होता, तब शरीर गतिमान नहीं रहता। इस प्रकार वास्तविक

प्रश्न है : 'वह सक्रिय तत्व क्या है?' यह शोध वेदान्त-दर्शन का केन्द्रबिन्दु है। वास्तव में, वेदान्त-सूत्र अथातो ब्रह्म-जिज्ञासा सूत्र से प्रारम्भ होता है : 'शरीरस्थ आत्मा का स्वरूप क्या है?' अत: वैदिक दर्शन के विद्यार्थी को पहले जीवित शरीर और मृत शरीर में भेद करना सिखाया जाता है। यदि वह इस तत्व को ग्रहण करने में असमर्थ रहता है, तो उसे तर्क के दृष्टिकोण से समस्या पर विचार करने के लिए कहा जाता है। कोई भी यह देख सकता है कि आत्मा, जो सक्रिय तत्व है, उसकी उपस्थिति के कारण शरीर में परिवर्तन होते हैं और वह गतिशील रहता है। सक्रिय तत्व की अनुपस्थिति में शरीर में न तो परिवर्तन होते हैं और न ही वह गतिशील रहता है। अतएव शरीर के अन्दर कुछ ऐसा होना चाहिए, जो इसे गति प्रदान करता है। यह अवधारणा बहुत कठिन नहीं है।

शरीर सदैव मृत है। यह एक बड़े यंत्र जैसा है। टेप-रेकॉर्डर, मृत पदार्थ से बनाया जाता है, परन्तु ज्योंही आप, जो एक जीवन्त व्यक्ति हैं, बटन को दबाते हैं, वह काम करने लगता है। इसी प्रकार शरीर भी निर्जीव पदार्थ है, परन्तु शरीर में जीवन-शक्ति होती है। जब तक वह सक्रिय तत्व शरीर में रहता है, तब तक शरीर प्रतिक्रिया करता है और जीवित लगता है। उदाहरणार्थ, हम सब में बोलने की शक्ति है। यदि मैं अपने एक शिष्य से यहाँ आने को कहूँ तो वह आयेगा। यदि सक्रिय तत्व शरीर को त्याग देता है, तब मैं उसे सहस्त्रों वर्षों तक बुलाता रहूँ फिर भी वह नहीं आयेगा। यह समझना बहुत आसान है।

परन्तु वह सक्रिय तत्व वास्तव में है क्या? यह एक अलग विषय है और आध्यात्मिक ज्ञान का वास्तविक प्रारम्भ इस प्रश्न के उत्तर के साथ होता है।

प्रो. डयुर्कहाईम : आपने जो मृत शरीर के बारे में बात कही, उसे मैं समझ सकता हूँ कि कोई तत्व इसके अन्दर अवश्य होगा, जो इसे जीवित रखता है। इससे केवल एक ही निश्चित निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि हम दो वस्तुओं की बात कर रहे हैं-शरीर और सक्रिय तत्व।परन्तु मेरा वास्तविक प्रश्न यह है कि हम अपने अन्तस्थ सक्रिय तत्व

की अनुभूति प्रत्यक्ष अनुभव के रूप में कैसे प्राप्त कर सकते हैं, न कि मात्र एक बौद्धिक निष्कर्ष के रूप में। क्या हमारे आभ्यन्तरिक [आध्यात्मिक] मार्ग में यह महत्वपूर्ण नहीं कि हम इस गम्भीर वास्तविकता का सचमुच अनुभव करें?

'मैं ब्रह्म अर्थात् आत्मा हूँ"

श्रील प्रभुपाद : आप स्वयं ही वह सक्रिय तत्व हो। जीवित शरीर और मृत शरीर अलग हैं, सक्रिय तत्व की उपस्थिति अथवाअनुपस्थिति ही भेद है। जब वह वहाँ नहीं रहता, शरीर को मृत कहा जाता है। अतएव वास्तविक आत्मा ही सक्रिय तत्व है। वेदों में हमें यह सूत्र मिलता है : सोऽहम्'-'मैं सक्रिय तत्व हूँ।" यह भी कहा गया है : आह ब्रह्मास्मि-'मैं यह भौतिक शरीर नहीं हूँ। मैं बह्म अर्थात् आत्मा हूँ।' यही आत्म-साक्षात्कार है। आत्म-साक्षात्कार कर चुके व्यक्ति का वर्णन भगवद्गीता में किया गया है। ब्रह्मभूत: प्रसन्नत्म् न शोचति न कांक्षति-जब मनुष्य आत्म-साक्षात्कार कर लेता है, तब वह न तो शोक करता है, न आकांक्षा करता है। सम: सर्वेषु भूतेषु-वह सभी प्राणियों के प्रति-मानव, पशु और सभी जीवधारियों के प्रति समभाव रखता है।

प्रो. डयुर्कहाईम : इस बात पर विचार करें। आपका कोई शिष्य कह सकता है-'मैं आत्मा हूँ।' परन्तु हो सकता है कि वह ऐसा अनुभव न कर सके।

श्रील प्रभुपाद : वह अनुभव कैसे नहीं कर सकता? वह जानता है कि वह सक्रिय तत्व है। अन्तत: प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि वह शरीर नहीं है। एक बच्चा तक यह जानता है। हम जिस तरह बात करते हैं, उसके परीक्षण से हम यह देख सकते हैं। हम कहते हैं, 'यह मेरी अंगुली है।" हम कभी नहीं कहते, 'मैं अंगुली।" तो वह 'मैं' क्या है? यही तो आत्म-साक्षात्कार है-'मैं यह शरीर नहीं हूँ।"

यह अनुभूति दूसरे जीवधारियों पर भी लागू की जा सकती है। आदमी पशुओं को क्यों मारता है? दूसरों को क्यों कष्ट देता है? जो आत्म-साक्षात्कार कर चुका है, वह देख सकता है : यह एक और आत्मा है। उसका शरीर मात्र भिन्न है, परन्तु जो सक्रिय

तत्व मेरे शरीर में है, वही इसके शरीर में भी कार्य कर रहा है।' आत्म-साक्षात्कार कर चुका व्यक्ति सभी प्राणियों को समान दृष्टि से देखता है, यह जानते हुए कि सक्रिय तत्व, आत्मा, न केवल मानव शरीरों में है,अपितु पशुओं, पक्षियों, मछलियों, कृमियों, वृक्षों और पौधों के शरीरों में भी है।

इसी जीवन में पुनर्जन्म

सक्रिय तत्व आत्मा है और मृत्यु के समय आत्मा एक शरीर से दूसरे शरीर में देहान्तरण करता है। शरीर भिन्न हो सकता है, परन्तु आत्मा वही रहता है। हम अपने जीवन-काल में भी इस शारीरिक परिवर्तन का अनुभव कर सकते हैं। हमने शैशव से कुमारावस्था में देहान्तरण किया है, कुमारावस्था से यौवन में और यौवन से प्रौढ़ावस्था में। फिर भी इस समूचे काल में चेतन 'स्व' अथवा आत्मा वही रहा है। शरीर भौतिक है, और वास्तविक "स्व" आध्यात्मिक है। जब कोई यह समझने लगता है, तब वह स्वरूप-सिद्ध कहलाता है।

प्रो. डयुर्कहाईम : मैं समझता हूँ कि पश्चिमी देशों में अब हम एक अत्यन्त निर्णायक क्षण की ओर अग्रसर हैं, क्योंकि हमारे इतिहास में पहली बार, यूरोप और अमरीका के लोग उन आंतरिक अनुभूतियों पर गम्भीरता से विचार करने लगे हैं जिनसे सत्य प्रकट होता है। निस्सन्देह, पूर्वी देशों में सदैव ऐसे दार्शनिक हुए हैं, जो उन अनुभूतियों को जान चुके हैं जिनसे मृत्यु का भयावह स्वरूप समाप्त हो जाता है और वह एक अधिक पूर्ण जीवन के लिए द्वार जैसी हो जाती है।

अपनी सामान्य शारीरिक आदतों को वश में लाने के इस अनुभव की लोगों को आवश्यकता है। यदि वे उस शारीरिक अनुभव के पार जा सकें, तो उन्हें अकस्मात् अनुभूति हो जाती है कि एक बिल्कुल अलग ही तत्व उनके भीतर काम कर रहा है। उन्हें अपने 'आन्तरिक जीवन" का बोध हो जाता है।

श्रील प्रभुपाद: भगवान् श्रीकृष्ण का भक्त स्वतः ही उस भिन्न तत्त्व का अनुभव करता है, क्योंकि वह कभी नहीं सोचता कि 'मैं यह शरीरहूँ।" वह सोचता है, अहं ब्रह्मास्मि-'मैं आत्मा हूँ।" भगवद्गीता में पहला उपदेश जो भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को दिया, वह यह है : 'मेरे प्रिय अर्जुन, तुम शरीर की स्थिति को बहुत गम्भीरता से ले रहे हो, परन्तु एक विद्वान् पुरुष इस भौतिक शरीर, मृत अथवा जीवित, को इतनी गम्भीरता से नहीं लेता।' आध्यात्मिक प्रगति के पथ पर पहला अनुभव यही है। इस संसार में हर व्यक्ति शरीर की बहुत अधिक चिन्ता करता है, और जब तक वह जीवित है, वह अनेक प्रकारों से इसकी देखभाल करता है। जब वह मर जाता है, तो लोग इसके ऊपर भव्य स्मारकों और मूर्तियों का निर्माण करते हैं। यह देहात्मबुद्धि है, परन्तु कोई मनुष्य उस सक्रिय तत्व को नहीं समझता, जो शरीर को जीवन तथा सौंदर्य प्रदान करता है। कोई नहीं जानता कि मृत्यु के समय वास्तविक आत्मा, सक्रिय तत्व, कहाँ चला गया है। यह अज्ञान ही है।

प्रो. डयुर्कहाईम : प्रथम विश्वयुद्ध में जब मैं नवयुवक था, तब मैंने मोर्चे पर चार वर्ष बिताये थे। अपनी टुकड़ी में मैं उन दो अफसरों में से एक था, जो घायल नहीं हुए थे। युद्ध-भूमि में मैंने बार-बार मृत्यु को देखा। अपने समीप खड़े हुए आदमियों को मैंने गोली लगते देखा और उनका जीवन-तत्व क्षणभर में ही चला गया। जो कुछ शेष रहा, जैसा कि आप कहते हैं, एक आत्मा-रहित शरीर था। परन्तु जब मृत्यु समीप थी और मैंने मान लिया था कि मैं भी मर सकता हूँ मुझे अनुभव हुआ कि मेरे भीतर ऐसा कुछ है, जिसका मृत्यु से कोई सरोकार नहीं है।

श्रील प्रभुपाद : हाँ, यही आत्मानुभूति है।

प्रो. डयुर्कहाईम : युद्ध के इस अनुभव ने मेरे ऊपर गहरा प्रभाव छोड़ा। यही मेरे आन्तरिक पथ का प्रारम्भ था। **श्रील प्रभुपाद :** वेदों में कहा गया है, नारायण-

पूरा सर्वे न कुतवन बिभ्यति/यदि कोई ईशानुभूत आत्मा है, तो वह किसी से भी नहीं डरता।

प्रो. डयुर्कहाईम : क्या ऐसा कहना सही है कि आत्मानुभूति कीप्रक्रिया आभ्यन्तरिक अनुभवों का एक क्रम है? यहाँ यूरोप में लोगों को ऐसे अनुभव हुए हैं। वास्तव में, मैं विश्वास करता हूँ कि यूरोप का सच्चा खजाना यही है कि बहुत से लोग ऐसे हैं जिन्हें युद्ध-क्षेत्रों, बन्दी-शिविरों और बम-आक्रमणों का अनुभव हुआ है। वे अपने मन में उन क्षणों की स्मृतियाँ संजोये हुए हैं, जब मौत इतनी निकट आ गई थी, जब वे घायल हुए थे और लगभग उनकी धजियाँ उड़ गई थीं, तब उन्हें अपने शाश्वत स्वरूप की झलक दिखाई दी। परन्तु अब लोगों को यह समझाने की आवश्यकता है कि युद्ध-भूमियों बन्दीशिविरों और बम-आक्रमणों की आवश्यकता नहीं है, जिससे वे उन आभ्यन्तरिक अनुभूतियों को गम्भीरता से समझ सकें। मानव जब दिव्य सत्ता के बोध से अकस्मात् संपर्क में आता है, तब वह समझने लगता है कि शरीर का अस्तित्व ही सब कुछ नहीं है।

शरीर स्वप्नवत् है

श्रील प्रभुपाद : हम प्रत्येक रात को इसका अनुभव कर सकते हैं। जब हम स्वप्न देखते हैं, तब हमारा शरीर तो शय्या पर पड़ा होता है, पर हम कहीं अन्यत्र चले जाते हैं। इस तरह हम सबको अनुभव होता है कि हमारी वास्तविक पहचान इस शरीर से पृथक् है। जब हम स्वप्न देखते हैं, तो शय्या पर पड़े हुए अपने शरीर को भूल जाते हैं। हम विभिन्न शरीरों और विभिन्न स्थानों में काम करते हैं। इसी प्रकार, दिन के समय हम अपने स्वप्न के उन शरीरों को भूल जाते हैं, जिनके द्वारा हमने अनेक स्थानों की यात्रा की। सम्भवत: अपने स्वप्न-शरीरों में हम आकाश में उड़े थे। रात में हम अपने जाग्रत शरीर को भूल जाते हैं, और दिन में हम अपने स्वप्न-शरीर को भूल जाते हैं। परन्तु हमारा चेतन आत्मा फिर भी जीवन्त रहता है, और हम दोनों शरीरों में अपने

अस्तित्व का अनुभव किए रहते हैं। इसलिए हमें यह निष्कर्षनिकालना होगा कि हम इन दोनों शरीरों में से एक भी नहीं हैं। कुछ समय के लिए हम एक प्रकार के शरीर में रहते हैं और मृत्यु के समय हम इसे भूल जाते हैं। अत: स्वप्न की भाँति शरीर वास्तव में मात्र एक मानसिक रचना है, किन्तु आत्मा इन सभी मनोरचनाओं से भिन्न है। यही है आत्मानुभूति। भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं :

ভুঞ্জিখালিঘৰ IUন্মাষ্ট্রংব্লল্পিত্নঃস্ব : HR Hন: | मनसस्तु ग़रा बुद्धियां बुद्धः प्रेरतस्तु सः //

“कर्मेन्द्रियाँ जड़ पदार्थ से श्रेष्ठ हैं, मन इन्द्रियों से श्रेष्ठतर है, बुद्धि मन से भी श्रेष्ठतर है और वह (आत्मा) बुद्धि से भी बढ़कर है।' (भगवद्गीता 3,42)

प्रो. डयुर्कहाईम : आज पहले आपने मिथ्या अहंकार की चर्चा की थी। क्या आपका मतलब यह था कि विशुद्ध अहंकार आत्मा है?

श्रील प्रभुपाद : हाँ, वही विशुद्ध अहंकार है। उदाहरण के लिए इस समय मेरा यह 78 वर्ष पुराना शरीर भारतीय है, और यह मेरा मिथ्या अहंकार है जो सोचता है, 'मैं भारतीय हूँ।'"मैं यह शरीर हूँ।" यह एक भ्रान्त अवधारणा है। किसी दिन यह नाशवान् शरीर विलुप्त हो जायेगा, और तब मुझे दूसरा अस्थायी शरीर मिल जायेगा। यह मात्र क्षणिक भ्रमजाल है। सच्चाई यह है कि आत्मा अपनी वासनाओं और कर्मों के आधार पर एक शरीर से दूसरे शरीर में देहान्तरण करता है।

प्रो. डयुर्कहाईम : क्या चेतना भौतिक शरीर से अलग होकर स्वतंत्र रूप से रह सकती है?

श्रील प्रभुपाद : हाँ, विशुद्ध चेतना अर्थात् आत्मा को भौतिक शरीर की आवश्यकता नहीं होती। उदाहरण के लिए, जब आप स्वप्न देखते हैं, आप अपने वर्तमान शरीर को भूल जाते हैं, फिर भी आप चेतन रहते हैं। आत्मा अर्थात् चेतना,

जल की भाँति है। जल शुद्ध होता है,परन्तु जैसे ही वह आकाश से गिरता है और पृथ्वी को छूता है, वह मटमैला हो जाता है।

प्रो. डयुर्कहाईम : हाँ।

श्रील प्रभुपाद : इसी प्रकार हम आत्माएँ हैं, हम शुद्ध हैं, परन्तु जैसे ही हम आध्यात्मिक लोक को छोड़ते हैं और इन भौतिक देहों के संपर्क में आते हैं, हमारी चेतना आच्छादित हो जाती है। चेतना शुद्ध रहती है, परन्तु अब वह कीचड़ (इस शरीर) से ढक गयी है। इसी कारण लोग लड़ते हैं। वे भ्रमवश अपने आपको शरीर मान बैठते हैं, यह सोचते हुए, 'मैं जर्मन हूँ," "मैं अंग्रेज हूँ," "मैं काला हूँ" 'मैं गोरा हूँ, 'मैं यह हूँ," 'मैं वह हूँ'-इतनी सारी शारीरिक उपाधियाँ। शरीरों की ये उपाधियाँ अशुद्धियाँ हैं। इसी कारण कलाकार नंगे चित्र अथवा नंगी मूर्तियाँ बनाते हैं। उदाहरण के लिए फ्रांस में वे नग्नता को 'विशुद्ध कला' समझते हैं। उसी प्रकार, जब आप आत्मा की नग्नता को अथवा सच्ची अवस्था को-इन शारीरिक उपाधियों से रहित-समझने लगते हैं, वही विशुद्धता होती है।

प्रो. डयुर्कहाईम : आत्मा शरीर से भिन्न है, इस तथ्य को समझना इतना कठिन क्यों प्रतीत होता है?

प्रत्येक व्यक्ति जानता है, 'मैं यह शरीर नहीं हूँ"

श्रील प्रभुपाद : यह कठिन नहीं है। आप इसका अनुभव कर सकते हैं। केवल मूर्खता के कारण लोग कुछ और सोचते हैं; परन्तु प्रत्येक व्यक्ति वस्तुत: जानता है, 'मैं यह शरीर नहीं हूँ।" इसका अनुभव करना बहुत आसान है। मेरा अस्तित्व है! मैं समझता हूँ कि मैं अपने शिशु-शरीर में रह चुका हूँ, मैं बालक-शरीर में भी था और एक लड़के के शरीर में भी था। मैं इतने सारे शरीरों में रह चुका हूँ, और इस समयमैं एक बूढ़े शरीर में हूँ। अथवा उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि आपने इस समय एक

काला कोट पहन रखा है। अगले ही क्षण आप सफेद कोट पहन सकते हैं। परन्तु आप न तो काला कोट हैं, न ही सफेद कोट; आपने मात्र कोटों को बदल लिया है। यदि मैं आपको, 'श्रीमान् काला कोट," पुकारूं तो यह मेरी मूर्खता होगी। इसी प्रकार अपने जीवन-काल में मैंने शरीरों को कई बार बदला है, परन्तु मैं इनमें से कोई भी शरीर नहीं हूँ। यही है सच्चा ज्ञान।

प्रो. डयुर्कहाईम : इतना सब होने पर भी क्या आप इसमें कठिनाई नहीं देखते हैं? उदाहरणार्थ, भले ही बौद्धिक रूप से आप अच्छी तरह समझ गये हों कि आप शरीर नहीं हैं, तथापि मृत्यु का भय आपको सता सकता है। क्या इसका मतलब यह नहीं है कि आपने इसे अनुभव से नहीं समझा ? ज्योंही आपने इसे अनुभव से समझ लिया, आपको मृत्यु का भय नहीं होना चाहिए, क्योंकि आप जानते हैं कि वास्तव में आप मर नहीं सकते।

श्रील प्रभुपाद : अनुभव एक उच्च अधिकारी से प्राप्त होता है-ऐसा कोई, जिसका ज्ञान उच्चतर है। वर्षों तक मैं शरीर नहीं हूँ, यह अनुभव करने का प्रयास करने की अपेक्षा मैं भगवान् से, श्रीकृष्ण से, जो अक्षत स्रोत हैं, इसका ज्ञान प्राप्त कर सकता हूँ। तब समझो कि मैंने एक प्रामाणिक अधिकारी से सुनकर अपने अमत्र्य स्वरूप का अनुभव प्राप्त कर लिया। यही पूर्ण विधि है।

प्रो. डयुर्कहाईम : हाँ, मैं समझता हूँ।

श्रील प्रभुपाद : इसलिए वेदों का उपदेश है-तद् विज्ञानाथ स गुरुम्। एवाभिगच्छेलू/'जीवन की पूर्णता का श्रेष्ठतम अनुभव प्राप्त करने के लिए आपको गुरु के पास जाना होगा।' और गुरु कौन है? किसके पास मुझे जाना चाहिए? मुझे उसके पास जाना चाहिए, जिसने अपने गुरु से समुचित रूप से श्रवण किया हो। इसी को गुरु-शिष्य परम्पराकहते हैं। मैं एक पूर्ण पुरुष से सुनता हूँ और ज्ञान को उसी प्रकार बिना

किसी परिवर्तन के बाँटता हूँ। भगवान् कृष्ण गीता में हमें ज्ञान देते हैं और हम बिना किसी परिवर्तन के उसका वितरण करते हैं।

प्रो. डयुर्कहाईम : गत बीस या तीस वर्षों में विश्व के पश्चिमी भाग में आध्यात्मिक विषयों के प्रति बड़ी रुचि जाग्रत हुई है। परन्तु दूसरी ओर, यदि विज्ञानी मनुष्य की आत्मा को विलुप्त कर देना चाहें, तो वे अपने परमाणु बमों से और दूसरे तकनीकी आविष्कारों से ऐसा करने में समर्थ होने की राह पर हैं। यदि वे मानवता को किसी उच्चतर लक्ष्य की ओर ले जाना चाहें, तो उन्हें वैज्ञानिक दृष्टि के माध्यम से मानव को भौतिक रूप में देखना बंद करना होगा। उन्हें हमको वैसे ही देखना चाहिए, जैसे हम हैं-चेतन आत्माएँ।

मानव-जीवन का ध्येय

श्रील प्रभुपाद : आत्मानुभूति अथवा ईश्वरानुभूति मानव-जीवन का उद्देश्य है, परन्तु वैज्ञानिक यह नहीं जानते हैं। आज के समय में आधुनिक समाज का नेतृत्व अंधे और मूर्ख कर रहे हैं। तथाकथित तकनीकी वेत्ता, वैज्ञानिक और दार्शनिक जीवन के सच्चे लक्ष्य को नहीं जानते। और लोग स्वयं भी अंधे हैं, तो इस समय स्थिति ऐसी है कि अंधे लोग ही अंधों को रास्ता दिखा रहे हैं। यदि एक अंधा आदमी दूसरे अंधे को राह दिखाने का प्रयास करे, तो हम किस प्रकार के परिणामों की आशा कर सकते हैं? नहीं, विधि यह नहीं है। यदि कोई सत्य को समझना चाहता है, तो उसे किसी आत्मानुभूति प्राप्त पुरुष के पास जाना ही होगा। [कुछ और अतिथि कमरे में प्रवेश करते हैं]

शिष्य-श्रील प्रभुपाद, ये सज्जन धर्म-विज्ञान और दर्शनशास्त्र केआचार्य हैं। और ये हैं डॉ. दारा। ये जर्मनी में योग-अध्ययन और पूर्ण affigid, avid (Integral Philosophy) tire à yeII- ?

[श्रील प्रभुपाद उनका अभिवादन करते हैं, और वार्तालाप पुन: प्रारम्भ हो जाता है।]

प्रो. डयुर्कहाईम : क्या मैं एक अन्य प्रश्न पूछ सकता हूँ? क्या अनुभूति का कोई दूसरा स्तर नहीं है, जो सामान्य मानव के लिए चेतना का गहनतर मार्ग खोल सके ?

श्रील प्रभुपाद : हाँ इस अनुभूति का वर्णन भगवद्गीता (2.13) में श्रीकृष्ण ने किया है

नील्लिनीतिविद्यान्यस्वाक्ष्ठ्ठानष्टैलक्ष्मौ H◌ानसुशीलनसाॠIT
ệēTrofyllfợ7effkalay # gggafờ ll

'जिस प्रकार देहधारी आत्मा इस देह में बचपन से जवानी तथा जवानी से बुढ़ापे की ओर लगातार अग्रसर होता रहता है, उसी प्रकार आत्मा मृत्यु के समय दूसरे शरीर में चला जाता है। आत्मानुभूति प्राप्त कर चुका व्यक्ति इस प्रकार के परिवर्तन से घबराता नहीं है।"

परन्तु सबसे पहले मनुष्य को ज्ञान के इस आधारभूत सिद्धान्त को समझना चाहिए कि मैं यह शरीर नहीं हूँ। जब वह इस आधारभूत सिद्धान्त को समझ लेता है, तब वह गहनतर ज्ञान की ओर बढ़ सकता है।

प्रो. डयुर्कहाईम : मुझे ऐसा लगता है कि शरीर और आत्मा की इस समस्या पर पूर्वी और पश्चिमी दृष्टिकोण में बड़ा भेद है। पूर्व की शिक्षाओं में आपको शरीर से मुक्त होना पड़ता है, जब कि पश्चिमी धर्मों में मनुष्य अपने शरीर में ही आत्मा को अनुभव करने का प्रयास करता है।

श्रील प्रभुपाद : इसे समझना बहुत आसान है। हमने भगवद्गीता से सुना है कि हम आत्मा हैं और यह कि हम इस शरीर के भीतर हैं। हमारे दु:खों का मूल है शरीर के साथ हमारी पहचान। मैंने इस शरीर में प्रवेश किया है इसलिए मैं दु:ख भोग रहा हूँ। तो, चाहे पूर्वी हो यापश्चिमी, मेरा असली काम यह होना चाहिए कि मैं किस प्रकार इस शरीर से बाहर आऊँ। क्या यह बात स्पष्ट है?

प्रो. डयुर्कहाईम : हाँ।

श्रील प्रभुपाद : पुनजन्म शब्द का अर्थ यह है कि मैं आत्मा हूँ जिसने एक शरीर में प्रवेश किया है; परन्तु अगले जीवन में मैं किसी दूसरे शरीर में प्रवेश कर सकता हूँ। वह कुते का शरीर हो सकता है, बिल्ली का शरीर हो सकता है अथवा वह राजा का शरीर हो सकता है। किन्तु कष्ट तो होगा ही, चाहे राजा का शरीर हो या कुते का शरीर हो। इन कष्टों में जन्म, मृत्यु जरा और व्याधि सम्मिलित होंगे। इसलिए इन चार प्रकार के कष्टों के निवारण के लिए हमें इस शरीर से बाहर निकलना होगा। यही मनुष्य की असली समस्या है-कि वह अपने भौतिक शरीर से कैसे बाहर निकले।

प्रो. डयुर्कहाईम : इसमें बहुत से जीवन लगते हैं?

श्रील प्रभुपाद : इसमें बहुत से जीवन लग सकते हैं अथवा आप इसे एक ही जीवन-काल में कर सकते हैं। यदि आप अपने इसी जीवनकाल में समझ लें कि आपके कष्टों का कारण आपका यह शरीर है, तब आपको पता लगाना चाहिए कि आप शरीर से कैसे बाहर निकलें ? और जब आपको वह ज्ञान प्राप्त हो जाये, तो आप उस युक्ति को जान लेंगे जिससे तुरन्त इस शरीर से मुक्त हुआ जा सकता है।

प्रो. डयुर्कहाईम : परन्तु इसका मतलब यह तो नहीं है कि मैं अपने शरीर को मार डालूँ, क्या ऐसा है? क्या इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मैं यह अनुभव करूं कि मेरा आत्मा मेरे शरीर से स्वतंत्र है?

श्रील प्रभुपाद : नहीं, यह आवश्यक नहीं कि शरीर को मार डाला जाये। आपका शरीर मारा जाये या नहीं, एक न एक दिन आपको अपना वर्तमान शरीर तो छोड़ना ही होगा और दूसरा शरीर स्वीकार करना होगा। यह तो प्रकृति का विधान है, और आप इससे बच नहीं सकते।

प्रो. डयुर्कहाईम : ऐसा लगता है कि इसमें कुछ ऐसी बातें हैं, जो ईसाई धर्म के अनुरूप भी हैं।

श्रील प्रभुपाद : इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि आप ईसाई हैं या मुस्लिम अथवा हिन्दू। ज्ञान तो ज्ञान है। जहाँ कहीं ज्ञान मिल सके, उसे ग्रहण कर लेना चाहिए। और ज्ञान यह है कि प्रत्येक जीवात्मा भौतिक शरीर में कैद है। यह ज्ञान समान रूप से हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों-प्रत्येक व्यक्ति पर लागू होता है। आत्मा शरीर के अन्दर बन्दी है, इसलिए उसे जन्म, मृत्यु, जरा और व्याधि को भोगना ही होगा। परन्तु हम सब अनन्त काल तक जीना चाहते हैं; हम पूर्ण ज्ञान चाहते हैं; हम पूर्ण आनन्द चाहते हैं। इस गन्तव्य तक पहुँचने के लिए शरीर से मुक्त होना आवश्यक है। विधि तो यही है।

प्रो. दारा : आप इस बात पर बल देते हैं कि हमें शरीर से बाहर आना होगा। परन्तु क्या हमें मानव के रूप में अपना अस्तित्व स्वीकार नहीं करना चाहिए?

श्रील प्रभुपाद : आपका प्रस्ताव है कि हम अपने मानव-अस्तित्व को स्वीकार करें। क्या आप मानते हैं कि इस मानव-शरीर के भीतर होना परिपूर्ण है?

प्रो. दारा : नहीं, मैं नहीं कहता कि वह परिपूर्ण है। परन्तु हमें इसे स्वीकार करना चाहिए और किसी आदर्श स्थिति को उत्पन्न करने का प्रयास नहीं करना चाहिए।

पूर्णता कैसे प्राप्त करें?

श्रील प्रभुपाद : आप मानते हैं कि आपकी स्थिति पूर्ण नहीं है। इसलिए सही विचार यह होना चाहिए कि हम पता लगाएँ कि पूर्णता कैसे प्राप्त की जाए।

प्रो. दारा : परन्तु आत्मा के रूप में हमें पूर्ण क्यों होना चाहिए? हम मानव के रूप में पूर्ण क्यों नहीं हो सकते?

श्रील प्रभुपाद : आप पहले ही स्वीकार कर चुके हैं कि इस शरीर में आपकी स्थिति पूर्ण नहीं है। तो, आप इस अपूर्ण स्थिति के प्रति क्यों इतने आसक्त हैं?

प्रो. दारा : यह शरीर वह साधन है, जिसके द्वारा हम दूसरे लोगों के साथ विचारों का आदान-प्रदान (व्यवहार) कर सकते हैं।

श्रील प्रभुपाद : यह तो पशुओं और पक्षियों के लिए भी सम्भव है। प्रो. दारा : परन्तु हमारे बातचीत करने और पशु-पक्षियों के बातचीत करने में बड़ा अन्तर है। "

श्रील प्रभुपाद : क्या है वह अन्तर? वे अपने समुदाय में बातचीत करते हैं, और आप अपने समुदाय में बातचीत करते हैं।

प्रो. डयुर्कहाईम : मेरा विश्वास है कि असल बात यह है कि पशुओं में आत्मचेतना नहीं होती। वह नहीं समझता कि वास्तव में वह क्या है ?

पशुओं से ऊपर उठना

श्रील प्रभुपाद : हाँ, यही असली बात है। मानव यह समझ सकता है कि वह क्या है। पशु-पक्षी यह नहीं समझ सकते। अत: मानव होने के नाते, हमें आत्म-साक्षात्कार के लिए प्रयास करना चाहिए, न कि मात्र पशु-पक्षियों के स्तर पर व्यवहार करना। अतएव वेदान्त-सूत्र इस सूत्र से प्रारम्भ होता है : अथातो ब्रह्म जिज्ञासा-परम सत्य के विषय में जिज्ञासा करना मानव-जीवन का उद्देश्य है। यही मानव-जीवन का लक्ष्य है, न कि पशुओं की भाँति केवल आहार और निद्रा का भोग। हमारे पास अतिरिक्त बुद्धि है, जिसके द्वारा हम परम सत्य को समझ सकते हैं। श्रीमद्भागवतम् (1.2.10) में कहा गया है

YaLBLD DDBuGLLBBuBum DuOuB DBOLaL S

जfiवस्य तत्त्वfज्/स्/ नृ/थाi◌ं यह क#ifभ; /

“जीवन की आकांक्षाओं का लक्ष्य कभी भी इन्द्रियतृप्ति नहीं होना चाहिए। मनुष्य को जीने की इच्छा केवल इसलिए करनी चाहिए, क्योंकि मानव-जीवन उसे परम सत्य की जिज्ञासा करने में समर्थ बनाता है। सभी कार्यों का यही लक्ष्य होना चाहिए।'

प्रो. दारा : क्या दूसरों के हित के लिए हमारे शरीरों का उपयोग करना समय की बर्बादी है ?

श्रील प्रभुपाद : आप दूसरों का हित नहीं कर सकते, क्योंकि आप जानते ही नहीं कि हित क्या है। आप शरीर के सन्दर्भ में हित की बात सोच रहे हैं, किन्तु शरीर इस दृष्टिकोण से मिथ्या है कि आप शरीर नहीं हैं। उदाहरणार्थ, आप किसी कमरे में रहते हैं, परन्तु आप स्वयं तो वह कमरा नहीं हैं। यदि आप केवल कमरे को सजाते रहें और खाना भूल जायें, तो क्या इससे हित हो सकता है?

प्रो. दारा : मैं नहीं समझता कि शरीर से कमरे की इस प्रकार की

श्रील प्रभुपाद : इसका कारण यह है कि आप नहीं जानते कि आप शरीर नहीं हैं।

प्रो. दारा : परन्तु यदि आप कमरे से बाहर चले जायें, तो कमरा तो रहता है। किन्तु जब हम शरीर से बाहर चले जाते हैं, तो शरीर नहीं रहता।

श्रील प्रभुपाद : अन्ततः कमरा भी तो नष्ट हो जायेगा।

प्रो. दारा : मेरे कहने का मतलब है कि शरीर और आत्मा में अत्यन्त घनिष्ठता का सम्बंध होना आवश्यक है, एक प्रकार का ऐक्य-कम से कम उस अवधि तक जब तक हम जीवित हैं।

श्रील प्रभुपाद : नहीं, यह सच्चा ऐक्य नहीं है। इसमें एक अन्तर है। उदाहरणार्थ, वह कमरा जिसमें हम इस समय हैं, मेरे लिए तभी तकमहत्वपूर्ण है, जब तक मैं जीवित हूँ। अन्यथा इसका कोई महत्व नहीं। जब आत्मा शरीर को छोड़ देता है, तो शरीर को फेंक दिया जाता है, यद्यपि इसके मालिक को वह बहुत प्यारा था।

प्रो. दारा : परन्तु यदि आप अपने शरीर से अलग होना न चाहें, तो क्या होगा ?

श्रील प्रभुपाद : प्रश्न यह नहीं है कि आप क्या चाहते हैं। आपको अलग होना ही पड़ेगा। ज्योंही आपकी मृत्यु होगी, त्योंही आपके सम्बंधी आपके शरीर को फेंक देंगे।

प्रो. डयुर्कहाईम : कदाचित्, इससे अन्तर पैदा हो सकता है यदि व्यक्ति यह सोचे कि, 'मैं आत्मा हूँ और यह मेरा शरीर है," बजाय इसके कि 'मैं शरीर हूँ, और यह मेरा आत्मा है।"

अमरत्व का रहस्य

श्रील प्रभुपाद : हाँ, यह सोचना गलत होगा कि आप शरीर हैं, और आत्मा आपका है। यह सही नहीं है। अ7प आत्मा हैं, और आप एक अस्थायी शरीर से ढके हुए हैं। आत्मा महत्वपूर्ण तत्व है, न कि शरीर। उदाहरण के लिए, जब तक आप कोट पहने हैं, वह आपके लिए महत्व रखता है। परन्तु यदि वह फट जाये, तो आप उसे फेंक देते हैं, और दूसरा कोट खरीद लेते हैं। जीव निरन्तर इसी बात का अनुभव करता है। आप इस वर्तमान शरीर से अलग हो जाते हैं, और दूसरा शरीर स्वीकार कर लेते हैं। यही मृत्यु कहलाती है। वह शरीर जिसमें आप पहले वास कर रहे थे, महत्वहीन हो जाता है, और वह शरीर जिसे आप अब धारण किये हैं, महत्वपूर्ण हो जाता है। यही बड़ी समस्या है-लोग उस शरीर को इतना अधिक महत्व देते हैं, कुछ ही वर्षों में जिसकी अदला-बदली किसी दूसरे शरीर के साथ हो जायेगी।

3

आत्मानुसन्धान

यद्पि भौतिक शरीर के यांत्रिक क्रिया-कलाप की जानकारी में आधुनिक विज्ञान आगे बढ़ गयाहै, तथापि उसका ध्यान उस चिन्मय स्फुलिंग के विश्लेषण की और तनिक भी नहीं गया, जो शरीर को अनुप्राणित करता है। मान्ट्रियल गजट के एक लेख में, जोनीचे उद्दृत है, हम पते हैं कि विश्व-विख्यात ह्रदय-विशेषज्ञ विलफ्रेड जी. बिगलो इस बात पर जोर देता हैं कि, "आत्मा क्या है और वह कहाँ से आता है ?" इन प्रशनों पर विधिवत् शोध की जाए। इसीउद्धरण के आगे डा. बिगलो के तर्क के प्रत्युतर में लिखा गया श्रील प्रभुपाद का पात्र उद्रत किया गया है। श्रील प्रभुपाद आत्म-विज्ञान के सम्बन्ध में ठोस वैदिक साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं, और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उस चिन्मय स्फुलिंग को समझने हेतु एक व्यवहारिक विधि का संकेत देते हैं, जो शरीर को जीवन देता ह और पुनर्जन्म के सत्य को सिद्ध करता है।

मॉन्ट्रियल गजट का शीर्षक-
हृदय-शल्यचिकित्सक जानना चाहते हैं कि
आत्मा है क्या?

विन्डसर : कनाडा के एक विश्वविख्यात ह्रदय-शल्य चिकित्सक कहते हैं कि वे शरीर में आत्मा के अस्तित्व में विश्वास रखते हैं, जो मृत्यु के समय प्रस्थान कर जाता है, और कहते हैं कि धर्मशास्त्रियों को इसके विषय में अधिक जानकारी के लिए प्रयत्न करना चाहिए।

टोरान्टो जनरल अस्पताल में ह्रदय-शल्यचिकित्सा यूनिट के प्रमुख डॉ. विल्फ्रेड जी. बिगली ने कहा कि, 'एक ऐसे व्यक्ति की हैसियत से जो आत्मा के अस्तित्व में

विश्वास करता है," उनका विचार है कि समय आ गया है कि 'इसके रहस्य को अनावृत किया जाये और पता लगाया जाये कि वह है क्या।'

बिगलो उस पैनल के सदस्य थे, जो मृत्यु के सही-सही क्षण को परिभाषित करने के प्रयासों से सम्बन्धित एसेक्स काउण्टी मेडिकोलीगल सोसायटी के समक्ष विचार विमर्श के लिए उपस्थित हुआ था।

हृदय के एवं अन्य अंगों के प्रत्यारोपण के युग में यह प्रश्न उन मामलों में जीवन्त हो उठा है जब 'दाता' निश्चित रूप से मर रहे हों।

कनाडा की मेडिकल एसोसियेशन ने मृत्यु की व्यापक रूप से स्वीकृत परिभाषा प्रस्तुत की है कि मृत्यु वह क्षण है, जब रोगी मूच्छा की स्थिति में होता है और वह किसी प्रकार की उत्तेजना पर प्रतिक्रिया नहीं करता और मशीन पर रिकार्ड की गई उसके मस्तिष्क की विद्युततरंगें समतल होती हैं।

पैनल के दूसरे सदस्य थे, ओन्टेरियो सर्वोच्च न्यायालय केन्यायाधीश एडसन एल. हेनीज और विन्डसर विश्वविद्यालय के अध्यक्ष, जे. फ्रांसिस लेड़ी।

विचार-विमर्श में जिन प्रश्नों को बिगली ने उठाया था, उनकी व्याख्या करते हुए उन्होंने बाद में एक साक्षात्कार में बताया कि बत्तीस वर्षों तक शल्य-चिकित्सक के रूप में उनके काम ने उनके मन में कोई सन्देह नहीं छोड़ा है कि आत्मा है।

'ऐसे कुछ उदाहरण मिलते हैं, जहाँ आप उस क्षण स्वयं उपस्थित हों जब लोग जीवित दशा से मृत्यु में प्रवेश करते हैं और उनमें कुछ रहस्यात्मक परिवर्तन होते हैं।

“उस समय सर्वाधिक ध्यानाकर्षक परिवर्तन होता है : ऑखों में जीवन अथवा ज्योति का अभाव हो जाना। वे अपारदर्शी और पूर्णत: निजीव हो जाती हैं।

“हम जो देखते हैं, उसको शब्दों में लिखना कठिन है। वास्तव में मैं नहीं समझता कि इसको अच्छी तरह शब्दों में लिखना सम्भव भी है।”

“डीप प्रकीज' शल्य-तकनीक का क्षेत्र, जिसे हाइपोथर्मिया के नाम से जाना जाता है, उसमें अग्रणी कार्य करने के कारण और 'हार्ट वाल्व सर्जरी' के कारण बिगली विश्व-विख्यात हो गये। उन्होंने कहा कि 'आत्मा का अनुसन्धान' धर्म-विज्ञान एवं अन्य सम्बन्धित प्रवगों द्वारा विश्वविद्यालय में किया जाना चाहिए।'

इस विचार-विमर्श में लेड़ी ने कहा कि 'यदि आत्मा है, आप उसे देख तो नहीं सकते। आप उसे ढूँढ भी नहीं सकते।"

'यदि कोई जीवन-शक्ति अथवा जीवन-तत्व है, तो वह क्या है?' समस्या यह है कि 'आत्मा, भौगोलिक दृष्टि से, कहीं एक विशिष्ट स्थान पर तो होता नहीं है। वह शरीर में हर जगह है, और फिर भी शरीर में कहीं नहीं।'

लेड़ी ने कहा, 'प्रयोग प्रारम्भ करना अच्छा होगा, लेकिन मैं नहीं जानता कि आपको इनमें से किसी पर भी आँकड़े कैसे मिलेंगे' उन्होंने आगे बताया कि इस विचार-विमर्श ने उन्हें सोवियत अन्तरिक्षयात्री का स्मरण करा दिया जिसने अन्तरिक्ष से वापस आने पर बताया कि ईश्वर नाम की कोई चीज नहीं है, क्योंकि उसने उन्हें वहाँ ऊपर नहीं देखा।

बिगलो ने कहा कि कदाचित् ऐसा हो, किन्तु आधुनिक औषधविज्ञान में जब हम ऐसा कुछ पाते हैं जिसकी हम व्याख्या नहीं कर सकते, तो 'संकेत-शब्द यह होता है कि जवाब ढूँढ़िये, प्रयोगशाला में ले जाइये, उसे कहीं ऐसी जगह ले जाइये जहाँ सत्य को ढूँढ़ा जा सके।'

बिगली ने कहा कि मुख्य प्रश्न है, 'आत्मा कहाँ है और वह कहाँ से आता है?'

श्रील प्रभुपाद वैदिक साक्ष्य प्रस्तुत

करते हैं

मेरे प्रिय डॉ. बिगलो,

कृपया मेरा अभिवादन स्वीकार करें। मैंने हाल ही के गजट में रे कोरेली का एक लेख पढ़ा, जिसका शीर्षक था : एक हृदयशल्यचिकित्सक जानना चाहते हैं कि आत्मा क्या है। मुझे यह लेख बहुत रोचक लगा। आपकी टिप्पणियों से आपकी गहन अन्तर्दृष्टि का पता लगता है, इसलिए मैंने आपको इस विषय पर लिखने की बात सोची। सम्भवत: आप जानते हों कि मैं अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ का संस्थापक-आचार्य हूँ। कनाडा में-मॉन्ट्रियल, टोरंटो, वैंकूवर और हेमिल्टन में मेरे कई मन्दिर हैं। इस कृष्णभावनामृत आन्दोलन का उद्देश्य, प्रत्येक आत्मा को विशेष रूप से उसकी मूल आध्यात्मिक स्थिति की शिक्षा देना है।

इसमें सन्देह नहीं कि आत्मा मनुष्य के हृदय में विद्यमान रहता है, और वह उन सभी ऊर्जाओं का स्रोत है जो शरीर का पोषण करती हैं। आत्मा की शक्ति समूचे शरीर में व्याप्त रहती है और इसी का नाम चेतना है। चूँकि यह चेतना समूचे शरीर में आत्मा की शक्ति का विस्तार करती है, अत: हमें शरीर के प्रत्येक अंग में पीड़ा और आनन्द का अनुभव होता है। आत्मा व्यष्टि है और वह एक शरीर से दूसरे शरीर में देहान्तरण करता है, ठीक उसी प्रकार जैसे कि कोई व्यक्ति बाल्यावस्था से युवावस्था और तब वृद्धावस्था की ओर देहान्तरण करता है। जब हम नये शरीर में देहान्तरण करते हैं तो मृत्यु होती है, ठीक वैसे ही जैसे हम पुराने कपड़ों को बदल कर नये कपड़े पहनते हैं। इसे आत्मा का देहान्तरण कहा जाता है।

जब कोई आत्मा आध्यात्मिक जगत् के अपने असली घर को भूल कर इस भौतिक जगत् का भोग करना चाहता है, तो वह अस्तित्व के लिए इस संघर्षपूर्ण, कठोर जीवन को ग्रहण करता है। बारम्बार जन्म, मृत्यु, जरा तथा व्याधि का यह अस्वाभाविक जीवन उस समय रोका जा सकता है, जब उसकी चेतना भगवान् की परम चेतना से जुड़ जाये। यही कृष्णभावनामृत आन्दोलन का आधारभूत सिद्धान्त है।

जहाँ तक हृदय-प्रत्यारोपण का सम्बंध है, उस समय तक सफलता का प्रश्न नहीं उठता जब तक ग्रहण करने वाले व्यक्ति का आत्मा प्रत्यारोपित हृदय में प्रवेश नहीं कर जाता। अतएव आत्मा की सत्ता स्वीकार की जानी चाहिए। मैथुन में यदि आत्मा नहीं है, तो गर्भाधान नहीं हो सकता, और न ही गर्भ-धारण। गर्भ-निरोध गर्भाशय को बिगाड़ देता है, जिससे वह आत्मा के लिए अच्छा स्थान नहीं रहजाता। यह ईश्वर के आदेश के विरुद्ध है। ईश्वर के आदेश से एक आत्मा को किसी विशिष्ट गर्भाशय के लिए भेजा जाता है, किन्तु गर्भनिरोध-विधियों से उसे उत्त गर्भाशय से वंचित कर दिया जाता है, और उसे किसी दूसरे गर्भ में रखना पड़ता है। यह परम प्रभु के आदेश का उल्लंघन है। उदाहरणार्थ, एक व्यक्ति को लीजिए, जिसे एक विशिष्ट घर में रहना है। यदि वहाँ स्थिति इतनी अशान्त है कि वह उस घर में प्रवेश नहीं कर सकता, तो उसे बहुत हानि उठानी पड़ती है। यह नियम-विरुद्ध हस्तक्षेप है और कानून द्वारा दण्डनीय है।

निश्चय ही, 'आत्मा की शोध' का कार्य विज्ञान की प्रगति का सूचक होगा। परन्तु विज्ञान चाहे जितनी प्रगति कर ले, वैज्ञानिकों को आत्मा का पता नहीं मिलेगा। आत्मा के अस्तित्व को हम परिस्थितिजन्य तथ्यों के आधार पर ही स्वीकार कर सकते हैं, क्योंकि वैदिक साहित्य में उल्लेख है कि आत्मा का माप एक बिन्दु का दस हजारवाँ अंश है। इसलिए भौतिक विज्ञानियों के लिए आत्मा को पकड़ पाना सम्भव नहीं है। आप केवल उच्च अधिकारियों द्वारा दिये गए ज्ञान के आधार पर ही आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार कर सकते हैं। जिन तथ्यों को बड़े से बड़े वैज्ञानिक आज सत्य स्वीकार कर रहे हैं, हम इनकी व्याख्या बहुत समय पहले ही कर चुके हैं।

ज्योंही कोई आत्मा के अस्तित्व को समझ लेता है, वह तत्काल परमेश्वर के अस्तित्व को भी समझ सकता है। आत्मा और परमेश्वर में अन्तर इतना ही है कि परमात्मा विभु आत्मा हैं और जीवात्मा एक अत्यन्त लघु आत्मा है; परन्तु गुणात्मक

दृष्टि से दोनों समान हैं। परमेश्वर सर्वव्यापक हैं, और जीवात्मा स्थानीकृत है। परन्तु दोनों के स्वभाव और गुण समान हैं।

आपने कहा है कि मुख्य प्रश्न है, 'आत्मा कहाँ है, और वह कहाँ से आता है?" इसे समझना कठिन नहीं है। हमने पहले हीविवेचन कर लिया है कि आत्मा जीव के हृदय में कैसे वास करता है, और मृत्यु के पश्चात् किस प्रकार वह दूसरे शरीर में आश्रय लेता है। मूलत: आत्मा परमेश्वर से आता है। जैसे एक चिनगारी, जो आग से निकलती है, आग से दूर गिरने पर बुझती-सी मालूम होती है, वैसे ही आत्मा का स्फुलिंग प्रारम्भ में आध्यात्मिक जगत् से भौतिक जगत् में आता है। भौतिक जगत् में आत्मा तीन विभिन्न स्थितियों में गिर जाता है, जिन्हें प्रकृति के गुण कहा जाता है-सत्व, रजस् और तमस्। जब आग की चिनगारी सूखी घास पर पड़ती है, तो वह अपनी आग्नेय अभिव्यक्ति जारी रखती है। जब वह चिनगारी जमीन पर गिरती है, तो वह अपनी आग्नेय अभिव्यक्ति उस समय तक प्रकट नहीं करती, जब तक कि कुछ ज्वलनशील वस्तुएँ मौजूद न हों, और जब चिनगारी पानी पर गिरती है, तो वह बुझ जाती है। इस प्रकार, हम देखते हैं आत्मा तीन प्रकार की स्थितियों को प्राप्त करता है। इनमें से एक स्थिति के अन्तर्गत जीवात्मा अपने आध्यात्मिक स्वरूप को पूर्णत: भूला हुआ होता है; दूसरी में लगभग भूला हुआ होता है, किन्तु फिर भी इसमें अपने आध्यात्मिक स्वरूप का सहज भाव रहता है; और तीसरी में अपनी आध्यात्मिक पूर्णता की गहन खोज करता रहता है। आत्मा के चिन्मय स्फुलिंग द्वारा आध्यात्मिक पूर्णता प्राप्त करने के लिए एक प्रामाणिक विधि है, और यदि उसका ठीक तरह मार्गदर्शन किया जाये, तो वह अतिशीघ्र वापस घर भेज दिया जाता है, अर्थात् भगवान् के पास, जहाँ से वह मूलत: गिरा था।

यदि वैदिक साहित्य से अधिकृत इस ज्ञान को आधुनिक वैज्ञानिक समझ के आधार पर प्रस्तुत किया जाये तो यह मानव-समाज के लिए बड़ी देन होगी। तथ्य तो

सबके सामने हैं। केवल उन्हेंआधुनिक समझ के लिए ग्राह्य रूप में प्रस्तुत करना है। यदि संसारके डाक्टर और वैज्ञानिक सामान्य जनता को आत्मा के विज्ञान कोसमझने में सहायता दे सकें, तो यह एक महान योगदान होगा।

4
पुनर्जन्म के तीन इतिवृत्त

सहस्त्रों वर्षों से भारतवर्ष के महानतमआध्यात्मिक गुरुओं ने अपने शिष्यों से व्याख्या करने के निमित श्रीमद्भागवतम् के ऐतिहासिक उपाख्यानों का उपयोग किया है। वैसे ही तिन इतिवृत यहाँ उद्द्रथ किये गये हैं।

श्रीमद्भागवतम् एक दार्शनिक एवं साहित्यिक महाकाव्य हैं, जिसका भारतवर्ष के लिखित विशाल बोधिक भण्डार में महत्वपूर्ण स्थान है। भारतवर्ष का चिर-सनातन ज्ञान वेदों में प्रकट हुआ है, जो संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थ हैं और जो मानव-बोध के प्रत्येकक्षेत्र को छुते हैं। "वेद-साहित्य रूपी वृक्ष का पका हुआ फल" माना जाने वाला श्रीमद्भागवतम् वैदिक ज्ञान का सर्वांग सम्पूर्ण और अधिकृत प्रतिपादन है।

पुर्नजन्म के वैज्ञानिक सिद्धांत समय की गति के साथ नहीं बदलते, वे सदैव समान बने रहते हैं, औरकालातीत आख्यान आज से आधुनिक जिज्ञासु के लिए उतने ही प्रासंगिक हैं, जितने वे बीते हुए युगों में ज्ञानबोध के इच्छुक लोगों के लिए थे।

1
दस लाख माताओं वाला राजकुमार

कुछ लोग आत्मा को आश्चर्यवत् देखते हैं, कुछ इसका अन्य आश्चर्यवत् वर्णन करते है; कुछ इसे आश्चर्यवत् सुनते हैं, और अन्य उसके विषय में सुनने के बाद भी, उसे बिल्कुल नहीं समझ सकते।

अपनी प्रसिद्ध कविता " इनतीमेसंस आफ इम्मोट्रेलिटी" (Intimations of Immortality) में ब्रिटिश कवि विलियम वडस्वर्थ लिखता हैं, हमारा जन्म मात्र एक निद्रा और एक विस्मृति है।" अन्य एक कविता में वह एक शिशु को निम्नलिखित पंक्तियों सेसम्बोधित करता हैं–

इस परिवर्तनशील पृथ्वी पर आने वाले हे मधुर नवांगतुक ! यदि, जैसा कि कुछ अत्यंत प्राचीन ऋषियों ने निर्भयतापूर्वक अनुमान लगाया है, तुम्हारा अपना अस्तित्त्व था, और मानव-जन्म था, और, इससे पूर्व मानव माता-पिता ने तुम्हें आशीर्वाद दिया था, इससे बहुत, पहले तुम्हारी वर्तमान माता ने, ऐ असहाय अजनबी! तुमको छाती से लगा कर दूध पिलाया था।

श्रीमद्भागवतसू के निम्नलिखित ऐतिहासिक उपाख्यान में राजा चित्रकेतु का पुत्र अपने पूर्व-जन्मों का वर्णन करता है, और अपनेमाता-पिता को आत्मा की अविनाशी प्रकृति और पुनर्जन्म-विज्ञान का उपदेश देता है।

राजा चित्रकेतु की अनेक पत्नियाँ थीं, औरयधपी वह सन्तान उत्पन्न करने में समर्थ था, उसे उनमें से किसी से भी सन्तान प्राप्त नहीं हुई क्योंकि उसकी सुन्दर पत्नियाँ सब की सब बाँझ थीं।

एक दिन योगी-ऋषि अंगिरा राजा चित्रकेतु के महल में आये। राजा तत्काल अपने सिंहासन से उठकर खड़े हो गये और वैदिक परम्परा के अनुसार उनको प्रणाम किया।

ऋषि ने पूछा, 'हे राजा चित्रकेतु, मैं देख सकता हूँ कि तुम्हारा मन उद्विग्न है। तुम्हारा पीला मुख तुम्हारी गम्भीर चिन्ता को व्यक्त करता है। क्या तुमने अपने अभीष्ट ध्येय पूरे नहीं किये हैं?"

चूँकि अंगिरा महान् योगी थे, अत: वे राजा की वेदना का कारण जानते थे, किन्तु अपने ही कारणों से उन्होंने चित्रकेतु से पूछा, मानो उन्हें जानने की आवश्यकता हो।

राजा चित्रकेतुने उत्तर दिया, 'हे अंगिरा! महान् तपस्या करने के कारण आपने पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया है। आप मुझ-जैसे बद्धात्माओं की प्रत्येक आन्तरिक और बाह्य बात जान सकते हैं। हे महात्मन्! आपको हर बात का ज्ञान है, फिर भी आप मेरी चिन्ता का कारण पूछते हैं। अतएव आपके आदेश के पालन हेतु मैं अपने कष्ट का कारण बताता हूँ। किसी भूखे आदमी को फूलों की माला से सन्तुष्ट नहीं किया जा सकता। उसी प्रकार, मेरा विशाल साम्राज्य और अतुल सम्पति मेरे लिए निरर्थक हैं, क्योंकि मैं मनुष्य की सच्ची सम्पति से वंचित हूँ। मुझे पुत्र नहीं है। क्या आप मुझे वास्तविक रूप में सुखी बनने और पुत्र-प्राप्ति में सहायता नहीं कर सकते?"

अंगिरा, जो बहुत दयालु थे, राजा की सहायता करने के लिए तैयार हो गये। उन्होंने देवताओं के लिए एक विशिष्ट यज्ञ किया, और यज्ञ मेंअर्पित अन्न को प्रसाद के रूप में चित्रकेतु की सर्वश्रेष्ठ रानी कृतघुति को दिया। अंगिरा ने कहा, 'हे राजन्! अब

तुम्हें एक पुत्र प्राप्त होगा, जो तुम्हारे लिए हर्ष और शोक दोनों का कारण बनेगा।" इसके बाद, राजा के उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना, ऋषि अन्तर्धान हो गये।

चित्रकेतु यह जान कर बहुत हर्षित हुए कि अन्ततः उन्हें एक पुत्र प्राप्त होगा, परन्तु वे ऋषि के अन्तिम वचनों से भ्रमित हो गए।

'अंगिरा कहना चाहते होंगे कि जब मुझे पुत्र उत्पन्न होगा, तो मैं बहुत प्रसन्न हूँगा। यह तो निश्चित रूप से सत्य है। परन्तु बालक शोक का कारण होगा, इससे उनका क्या मतलब हो सकता है? निस्सन्देह, वह मेरा इकलौता पुत्र होने के कारण अपने आप ही मेरे सिंहासन और राज्य का उत्तराधिकारी बन जायेगा। अतएव वह कदाचित् अभिमानी और अवज्ञाकारी हो सकता है। वही शोक का कारण हो सकता है। किन्तु कोई पुत्र न होने की अपेक्षा अवज्ञाकारी पुत्र का होना अच्छा है।'

कुछ समय पश्चात् कृतद्युति ने गर्भधारण किया और उसे एक पुत्र हुआ। इस समाचार को सुनकर राज्य के सभी लोगों ने हर्ष मनाया। राजा चित्रकेतु हर्ष से फूला न समाया।

ज्यों-ज्यों राजा ने सावधानी के साथ पुत्र का लालन-पालन किया, त्यों-त्यों रानी कृतद्युति के लिए उसका प्रेम दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगा, और अपनी बाँझ पत्नियों के लिए उसका प्रेम धीरे-धीरे समाप्त हो गया। दूसरी रानियाँ निरन्तर अपने भाग्य को कोसतीं, क्योंकि जो पत्नी पुत्रहीन होती है वह घर पर पति द्वारा उपेक्षित रहती है, और उसकी सपत्नियाँ उसके साथ दासी-जैसा बर्ताव करती हैं। बाँझ पत्नियाँ क्रोध और ईर्ष्या की अग्नि में जलने लगीं। ज्यों-ज्यों उनकी ईर्ष्या बढ़ने लगी, उनकी बुद्धि क्षीण होती गई और उनके हृदय पत्थर-जैसे कठोर होते गये। उन्होंने एक गुप्त मंत्रणा में निश्चिय किया कि अपने पति काप्रेम पुनः प्राप्त करने की उनकी दुविधा का मात्र एक समाधान हैबालक को विष दिया जाये।

एक दिन दोपहर के समय, जब रानी कृतघुति अपने महल के आँगन में चहल कदमी कर रही थी, उसे अपने कमरे में शान्तिपूर्वक सोये पुत्र का विचार आया। चूँकि वह पुत्र को अत्यधिक स्नेह करती थी और क्षण भर के लिए भी वह उससे अलग होना सह नहीं सकती थी, अत: उसने धात्री को आदेश दिया कि वह जाये तथा राजकुमार को नींद से जगाकर बगीचे में ले आये।

परन्तु जब दासी बच्चे के समीप पहुँची, तो उसने देखा कि राजकुमार की आँखें ऊपर की ओर पलट गई हैं, और उसमें जीवन का कोई चिह्न नहीं है। भयभीत होकर उसने रुई का एक फाहा बालक के नथुनों के नीचे रखा, परन्तु रुई हिली नहीं। यह देख कर वह चीखने लगी : 'हाय! अब मैं मर गई!' और वह जमीन पर गिर पड़ी। भारी उद्विग्नता में वह दोनों हाथों से छाती पीटने लगी और जोर-जोर से रोने लगी।

कुछ देर हो गई, और चिन्तातुर रानी बालक के शयन-कक्ष में गई। धात्री का क्रन्दन सुन कर उसने कमरे में प्रवेश किया और देखा कि उसका पुत्र इस दुनिया से चल बसा है। गहन शोक में रानी के केश और वस्त्र अस्त-व्यस्त हो गये, तथा वह मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी।

जब राजा ने पुत्र की अचानक मृत्यु का समाचार सुना, तो वे शोक से लगभग अंधे हो गए। उनका शोक ज्वाला की तरह बढ़ने लगा, और जैसे ही वे मृत बालक को देखने के लिए दौड़े, वे बार-बार लड़खड़ाने लगे और गिरने लगे। अपने मंत्रियों और राज-दरबारियों से घिरे हुए राजा ने बालक के कक्ष में प्रवेश किया और वे बालक के पैरों के पास गिर पड़े। उनके केश और वस्त्र तितर-बितर हो गये। जब उनकी चेतना लोटी, उनकी साँस भारी थी, उनकी आँखे आँसुओ सेभरी हुई थीं, और वे बोलने में असमर्थ थे।

जब रानी ने अपने पति को गहन शोक में डूबे हुए देखा और मृत पुत्र को पुन: देखा, तो वह भगवान् को कोसने लगी। इससे राजमहल के सभी निवासियों के हृदय में

वेदना बढ़ने लगी। रानी की पुष्पमालाएँ उसके शरीर से खिसकने लगीं, और उसके चिकने, घने, काले केश उलझ गये। उसकी आँखों के नीचे लगे अंगराग गिरते हुए आँसुओं से धुलने लगे।

'हे विधाता! तुमने पिता के जीवन-काल में ही उसके पुत्र को मृत्यु दी है। तुम निश्चित ही जीवों के शत्रु हो, और तुम बिल्कुल दयालु नहीं हो।" अपने प्यारे पुत्र की ओर मुड़ते हुए वह बोली : मेरे प्रिय पुत्र! मैं निस्सहाय और दु:खी हूँ। तुम्हें मेरा संग नहीं छोड़ना चाहिए। तुम मुझे छोड़ कर कैसे जा सकते हो? अपने शोकाकुल पिता की ओर देखो! तुम बहुत समय तक सो चुके हो। अब दया करके जाग जाओ। तुम्हारे साथी तुम्हें खेलने के लिए पुकार रहे हैं। तुम्हें बहुत भूख लगी होगी। इसलिए तुम तुरन्त खड़े हो जाओ और भोजन कर लो। मेरे प्रिय पुत्र! मैं अत्यन्त अभागी हूँ, क्योंकि अब मैं तुम्हारी मीठी मुस्कान नहीं देख सकती। तुमने सदा के लिए आँखे मूंद ली हैं। तुम इस लोक से दूसरे लोक को ले जाए गये हो, जहाँ से अब तुम लौटोगे नहीं। मेरे प्रिय पुत्र! मन को लुभाने वाली तुम्हारी आवाज न सुनने के कारण मैं अब जीवित नहीं रह सकती।'

राजा भी दहाड़ें मार के रोने लगे। चूँकि माता-पिता विलाप कर रहे थे, अत: उनके सभी साथी उनके साथ बालक की असामयिक मृत्यु पर क्रन्दन करने लगे। अचानक घटी दुर्घटना के कारण राज्य के शोक-संतप्त सभी नागरिक लगभग अचेत हो गये।

जब महर्षि अंगिरा की समझ में आया कि राजा शोक के सागरमें डूब कर मृतप्राय हो गये हैं, तो वे अपने मित्र नारदमुनि के साथ वहाँ गये।

दोनों ऋषियों ने देखा कि राजा शोक से अभिभूत होकर शव के पास मृतवत् लेटे पड़े हैं। अंगिरा ने तीव्र स्वर में राजा को पुकारा, 'हे राजन्! अज्ञान के अन्धकार से जागो! इस मृत शरीर का तुम्हारे साथ क्या सम्बंध है और तुम्हारा उसके साथ क्या

सम्बंध है? तुम कह सकते हो कि तुम्हारा अब पिता-पुत्र का सम्बंध है, परन्तु क्या तुम सोचते हो कि यह सम्बंध इसके जन्म से पहले था? क्या यह सम्बंध वास्तव में अभी भी है? अब जबकि इसकी मृत्यु हो गई है, क्या वह सम्बंध बना रहेगा? हे राजन्! जैसे समुद्र की लहरों की शक्ति के कारण रेत के क्षुद्र कण कभी समीप आ जाते हैं तो कभी अलग हो जाते हैं, से कभी साथ आ जाते हैं तो कभी अलग हो जाते हैं।' अंगिरा राजा को समझाना चाहते थे कि शरीर के सारे सम्बंध अस्थायी हैं।

ऋषि कहते गये, 'मेरे प्रिय राजन्! जब मैं पहले तुम्हारे राजमहल में आया था, मैं तुम्हें सर्वश्रेष्ठ वरदान अर्थात् दिव्य ज्ञान दे सकता था, परन्तु जब मैंने देखा कि तुम्हारा मन भौतिक वस्तुओं में लिप्त है, मैंने तुम्हें केवल एक पुत्र दिया जो तुम्हारे लिए हर्ष और शोक का कारण बना। अब तुम एक ऐसे मनुष्य का दु:ख अनुभव कर रहे हो, जिसको पूत्र और पुत्रीयां होते हैं। ये स्त्री, बच्चे और सम्पति जैसे दृश्यमान् पदार्थ स्वप्न से अधिक कुछ नहीं हैं। हे राजा चित्रकेतु! इसलिए तुम समझने का प्रयास करो कि तुम वास्तव में कौन हो। सोचो कि तुम कहाँ से आये हो, इस शरीर को छोड़ने के बाद कहाँ जाओगे और तुम किस कारण भौतिक शोक के वश में हो गये हो।'

तब नारद मुनि ने एक आश्चर्यजनक कार्य किया। अपनी यौगिक शक्ति से उन्होंने राजा के मृत पुत्र की आत्मा को सब के सामनेदृष्टिगोचर कर दिया। तत्काल, वह कक्ष चौंधिया देने वाले आलोक से भर उठा, और मृत बालक हिलने-डुलने लगा। नारद ने कहा, 'हे जीवात्मा! तुम्हें समस्त सौभाग्य प्राप्त हों। अपने माता-पिता को देखो। तुम्हारी मृत्यु के कारण तुम्हारे सारे मित्र और सम्बंधी शोकाकुल ही रहे हैं। तुम्हारी अकाल मृत्यु के कारण तुम्हारा शेष जीवन अभी बचा हुआ है। इसलिए तुम अपने शरीर में पुन: प्रवेश कर सकते हो, और अपने मित्रों और सम्बन्धियों के साथ इस जीवन के निर्धारित वर्षों में से शेष वर्षों का भोग कर सकते हो, और बाद में तुम्हारे पिता द्वारा दी गयी राजसिंहासन व सम्पूर्ण ऐश्वर्य स्वीकार कर सकते हो।"

नारद की यौगिक शक्ति के कारण, जीवात्मा ने मृत शरीर में पुन: प्रवेश किया। मृत बालक उठ बैठा और छोटे बालक की बुद्धि के साथ नहीं बल्कि एक मुक्त आत्मा के पूर्ण ज्ञान के साथ बोलने लगा, 'अपने भौतिक कर्मों के फलों के अनुसार, मैं जीवात्मा, एक शरीर से दूसरे शरीर में देहान्तरण करता हूँ और कभी देव-योनियों में, कभी निम्न पशु-योनियों में, कभी वनस्पतियों में तो कभी मनुष्य-योनियों में जन्म लेता हूँ। मेरे किस जन्म में ये दोनों व्यक्ति मेरे माता-पिता थे? सच तो यह है कि मेरा कोई माता-पिता नहीं है। मेरे असंख्य मातापिता रह चुके हैं। मैं इन्हीं दो को अपने माता-पिता कैसे स्वीकार कर सकता हूँ?"

वेदों की शिक्षा है कि सनातन जीवात्मा भौतिक तत्वों से निर्मित शरीर में प्रवेश करता है। यहाँ हम देखते हैं कि ऐसे ही एक जीवात्मा ने राजा चित्रकेतु और उसकी पत्नी द्वारा उत्पन्न किये गये शरीर में प्रवेश किया। फिर भी, वह वास्तव में उनका पुत्र नहीं था। जीव भगवान् का सनातन पुत्र है, परन्तु वह इस भौतिक संसार का भोग करना चाहता है, अत: भगवान् उसे विविध शरीरों में प्रवेश करने का अवसर देते हैं। तथापि विशुद्ध जीवात्मा का अपने माता-पिता से प्राप्त भौतिक शरीर सेकोई वास्तविक सम्बंध नहीं होता है। इसलिए उस आत्मा ने जिसने चित्रकेतु के पुत्र के शरीर को धारण किया था इस बात को मानने से साफ इनकार कर दिया कि राजा और रानी उसके माता-पिता हैं।

उस आत्मा ने आगे कहा, 'यह भौतिक संसार, जो एक तेजी से बहती नदी के समान है, इसमें सभी लोग समयानुसार मित्र, सम्बंधी और शत्रु हो जाते हैं। वे तटस्थ रहकर भी व्यवहार करते हैं और अन्य अनेक सम्बंधों के अनुरूप भी। किन्तु इन विविध व्यवहारों के बावजूद भी, किसी का किसी से स्थायी सम्बंध नहीं होता है।'

चित्रकेतु अपने पुत्र के लिए विलाप कर रहा था, जो अब मर चुका था, परन्तु वह इस स्थिति पर एक अन्य प्रकार से भी विचार कर सकता था। वह सोच सकता था,

'यह जीवात्मा पूर्व-जन्म में मेरा शत्रु था और अब पुत्र के रूप में पैदा होकर, वह मुझे सिर्फ दु:ख व शोक देने के लिए असमय छोड़े जा रहा है।" राजा को अपने मृत पुत्र को अपना पूर्व-शत्रु क्यों नहीं समझना चाहिए, और शोकाकुल होने के बजाय एक शत्रु की मृत्यु पर उल्लसित क्यों नहीं होना चाहिए?

चित्रकेतु के पुत्र के शरीरस्थ जीवात्मा ने कहा, 'जिस प्रकार स्वर्ण और दूसरी वस्तुएँ क्रय-विक्रय के द्वारा निरन्तर एक स्थान से दूसरे स्थान को स्थानान्तरित की जाती हैं, उसी प्रकार जीव अपने कर्माधीन होकर एक के बाद दूसरे पिता के वीर्य द्वारा विविध योनियों में शरीर धारण करता हुआ ब्रह्माण्ड भर में भ्रमण करता है।'

जैसा कि भगवद्गीता में व्याख्या की गई है, किसी पिता अथवा माता के कारण जीव जन्म नहीं लेता। जीवात्मा का निजी, सच्चा स्वरूप तथाकथित माता-पिता से पूरी तरह अलग है। प्रकृति के विधान से आत्मा, पिता के वीर्य में प्रवेश के लिए विवश होता है और माता के गर्भ में डाला जाता है। उसे कैसा पिता मिलेगा, यह उसके प्रत्यक्ष नियन्त्रण में नहीं है। यह उसके पूर्व-जन्मों के कर्मों द्वारा स्वतः हीनिर्धारित होता है। कर्म के विधान उसे विविध माता-पिताओं के पास जाने को विवश करते हैं, ठीक उस वस्तु की तरह जिसे बेचा और खरीदा जाता है।

जीवात्मा कभी तो पशु माता-पिता की और कभी मानव मातापिता का आश्रय लेता है। कभी कभी वह पक्षियों में से अपने मातापिता को स्वीकार करता है तो कभी स्वर्गिक लोकों में देव माता-पिता को स्वीकार करता है।

जैसे-जैसे आत्मा विविध शरीरों में देहान्तरण करता है, जीवन के हर रूप में-चाहे वह मानव हो, पशु, वृक्ष अथवा देव-योनि होउसे मातापिता मिलते हैं। यह बात अधिक कठिन नहीं है। असली कठिनाई है, किसी अ7ध्यात्मिक पिता का मिलना-एक प्रामाणिक आध्यात्मिक गुरु का मिलना। अतएव मानव का कर्तव्य है कि वह ऐसे प्रामाणिक आध्यात्मिक गुरु की खोज करे, क्योंकि उन्हीं के मार्गनिर्देशन से वह

पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त हो सकता है और आध्यात्मिक लोक में अपने मूल घर को लौट सकता है।

विशुद्ध आत्मा ने आगे कहा, 'जीवात्मा सनातन है और तथाकथित माताओं और पिताओं से उसका कोई सम्बंध नहीं होता। वह मिथ्या ही अपने आपको उनका पुत्र मान लेता है और उनके साथ प्रेम का व्यवहार करता है। तथापि उसके मरने के बाद यह सम्बंध भी समाप्त हो जाता है। इन परिस्थितियों में, किसी को हर्ष और शोक में मिथ्या ही नहीं फंस जाना चाहिए। जीव सनातन और अविनाशी है; न उसका आदि है और न अन्त; न उसका जन्म होता है, न मृत्यु। जीवात्मा गुण में भगवान् के समान है। दोनों ही 'चिन्मय" व्यक्ति हैं परन्तु अत्यन्त क्षुद्र होने के कारण जीव का भौतिक शक्ति से भ्रमित के अनुसार अपने लिए शरीरों का सृजन करता है।"

वेद हमें बताते हैं कि आत्मा भौतिक जगत् में अपने जीवनों के लिए स्वयं उत्तरदायी है, जहाँ वह एक भौतिक शरीर के बाद दूसरे भौतिक शरीर में पुनर्जन्म के चक्र में फैंस जाता है। अगर वह चाहे, तो भौतिक अस्तित्व के कारागार में कष्ट सहता रह सकता है, अथवा वह आध्यात्मिक लोक में अपने घर को लौट सकता है। यद्यपि भगवान् अपनी भौतिक शक्ति के द्वारा जीवों की इच्छा के अनुरूप उन्हें शरीर देने की व्यवस्था करते हैं, तथापि भगवान् की वास्तविक इच्छा यही होती है कि आत्माएँ भौतिक जीवन के पीड़ादायक आवागमन चक्र से छूट जायें, और भगवान् के पास अपने घर वापस लौट आयें।

अकस्मात् बालक शान्त हो गया, क्योकि विशुद्ध आत्मा ने बालक के शरीर को छोड़ दिया और वह शरीर फर्श पर निर्जीव होकर लुढ़क गया। चित्रकेतु और उसके अन्य सम्बंधी आश्चर्यचकित हो गये। उनके स्नेह की जंजीरें कट गई, और उन्होंने शोक त्याग दिया। तब उन्होंने बालक के शरीर का दाह संस्कार किया। रानी कृतघुति की सपत्नियाँ जिन्होंने बालक को विष दिया था, बहुत लजित हुई। शोकाकुल होने के

कारण उन्हें अंगिरा की शिक्षाएँ याद आई और उन्होंने पुत्र उत्पन्न करने की अपनी आकांक्षा को त्याग दिया। ब्राह्मण पुरोहितों के निर्देशों का पालन करते हुए वे पवित्र नदी यमुना के तट पर गई, जहाँ वे अपने पापकर्मों के लिए प्रायश्चित करते हुए नित्य स्नान और प्रार्थना करने लगीं।

चूँकि राजा चित्रकेतु और उसकी रानी, पुनर्जन्म के विज्ञान के साथ-साथ, आध्यात्मिक ज्ञान से पूरी तरह अवगत हो चुके थे, अत: उन्होंने अपने स्नेह को आसानी से त्याग दिया जो कष्ट, भय, शोक और भ्रम की ओर ले जाता है। यद्यपि भौतिक शरीर के प्रति आसक्ति को त्यागना बहुत कठिन होता है, तथापि वे आसानी से इसका त्याग करने में सक्षम हो गए, क्योंकि उन्होंने इन्द्रियातीत ज्ञान की तलवार से उसका उच्छेदन किया था।

2

ममता का शिकार

जिस प्रकार मनुष्य पुराने वस्त्रोंको त्याग कर नये वस्त्र धारण करता हैं, उसी प्रकार आत्मा पुराने और अनुपयोगी देहों को छोड़ते हुए नये भौतिकशरीरों को अपनाता हैं।

-भगवद्गीता

2.12

ईसा पूर्व की पहली शताब्दी में रोमन कवि ओविड ने निम्नलिखित काव्य-पंकतिया लिखीथीं, जिनमें उन्होंने एक अभागे मनुष्य के दुर्भाग्य का वर्णन किया था,

जो अपने कर्मों और इच्छाओं के कारण विकास के सोपान में कुछ सीढ़ियाँ नीचे खिसक आया था।

मुझे यह बतलाते लज्जा आती है, पर मैं बताऊंगा– मेरे ऊपर कठोर चुभने वाले बाल उग आये थे। मैं बोल नहीं सकता था, लेकिन केवल गुराती धन्निया निकलती थीं, शब्दों केबजाय। मुझेलगा, मेरामुँह कठोरहोताजारहाथा। नाक केस्थानपरटोटी थी, और, मेरा चेहरा जमीं को देखने के लिए झुक गया था। मेरी गर्दन बड़ी-मोटी पेशियों से फूल गई थी, और वह हाथ जो प्याले को होठों तक उठता था अब जमीं पर पग-चिन्ह बनाता था।

ओविड के समय से लगभग तीन हजार वर्ष पहले रचे गए श्रीमद्भागवतम् में निम्नलिखित अद्‌भुत उपाख्यान है, जो पुनर्जन्म के सिद्धान्तों की क्रिया को नाटकीय ढंग से बताता है। भारतवर्ष के महान् और धर्मात्मा सम्राट् भरत को एक हिरन के प्रति अपनी अत्यधिक आसक्ति के कारण मनुष्य-रूप पुन: पाने से पूर्व एक जन्म हिरन के शरीर में बिताना पड़ा था।

राजा भरत एक बुद्धिमान् और अनुभवी महाराज थे, जिनके बारे में सोचा जा सकता था कि वे सैकड़ों वर्षों तक राज्य करेंगे, परन्तु अपने यौवन-काल में ही उन्होंने अपना सब कुछ त्याग दिया-अपनी रानी, परिवार तथा विशाल साम्राज्य-और वे वन को चले गये। ऐसा करने में वे प्राचीन भारतवर्ष के महान् ऋषियों की शिक्षाओं का पालन कर रहे थे, जो जीवन के अन्तिम भाग को आत्म-साक्षात्कार हेतु लगाने की संस्तुति करते हैं।

राजा भरत जानते थे कि महान् सम्राट् के रूप में उनकी स्थिति स्थायी नहीं है; इसलिए उन्होंने मरणपर्यन्त राजगद्दी से चिपके रहने की चेष्टा नहीं की। अन्तत: राजा का शरीर भी मिट्टी, राख, या कीड़ों और अन्य पशुओं का भोजन बनता है। परन्तु शरीर के भीतर अविनाशी आत्मा, विशुद्ध 'स्व' है। योगसाधना के द्वारा आत्मा को

अपने विशुद्ध आध्यात्मिक स्वरूप के प्रति जाग्रत किया जा सकता है। एक बार यदि यह हो गया, तो आत्मा को भौतिक शरीर के भीतर कारावास की एक और अवधि बिताना आवश्यक नहीं होता।

यह समझते हुए कि जीवन का परम लक्ष्य पुनर्जन्म के चक्र से स्वयं को मुक्त करना है, राजा भरत हिमालय की तराई में स्थित पुलहआश्रम नामक एक पवित्र तीर्थस्थान में गए। वहाँ भूतपूर्व राजा गंडकी नदी के तट पर वन में एकान्त वास करने लगे। राजसी वेश की जगह, वे अब केवल हिरन की खाल के वस्त्र पहनते। उनके केश और दाढ़ीलम्बे और जटा जैसे हो गये, जो सदैव गीले मालूम पड़ने लगे, क्योंकि वे दिन में तीन बार नदी में स्नान करते थे।

प्रतिदिन प्रात:काल में भरत ऋगवेद में वर्णित स्तोत्र का पाठ करके भगवान् की पूजा करते थे, और सूर्योदय के समय वे निम्नलिखित मंत्र का उच्चारण करते थे : 'भगवान् शुद्ध सत्व में स्थित हैं। वे समस्त ब्रह्माण्ड को प्रकाशित करते हैं; अपनी विविध शक्तियों के द्वारा, वे भौतिक भोगों को चाहने वाले सभी जीवधारियों का पालन करते हैं, और वे अपने भक्तों को सब प्रकार के आशीर्वाद देते हैं।'

दिन में वे विविध फल और कंदमूल इकट्ठा करते और ये साधारण भोज्य-पदार्थ वेद-शास्त्रों के निर्देशानुसार वे भगवान् कृष्ण को समर्पित करते, और तब उन्हीं को खाते। यद्यपि वे सांसारिक ऐश्वर्य से सम्पन्न महान् राजा रह चुके थे, अब उनके तपोबल से भौतिक भोगों के लिए उनकी सभी इच्छाएँ समाप्त हो गई। इस प्रकार वे जन्म-मृत्यु-चक्र के बंधन के मूल कारण से मुक्त हो गये।

पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के निरंतर ध्यान से भरत को आध्यात्मिक आनन्द के लक्षणों की अनुभूति होने लगी। उनका हृदय आध्यात्मिक प्रेम-जल से पूर्ण झील की तरह हो गया, और जब उनका मन इस झील में स्नान करता, तब उनकी आँखों से आनन्द के आँसू बहने लगते।

एक दिन जब नदी-तट पर भरत ध्यान कर रहे थे, एक हिरनी वहाँ पानी पीने आई। जब वह पानी पी रही थी, तब समीप ही वन में एक सिंह जोर से दहाड़ा। अत्यन्त भयभीत होकर वह उछली और नदी से दूर भागी। चूँकि हिरनी गर्भवती थी, भागने के कारण उसके गर्भ से एक बच्चा तेजी से बहती हुई नदी के जल में जा गिरा। भय से काँपती और गर्भपात से दुर्बल हो जाने के कारण, हिरनी एक गुफा में घुस गई, जहाँ वह शीघ्र ही मर गई।

ज्योंही ऋषि (भरत) ने हिरन के बच्चे को नदी में बहते हुए देखा, उनके हृदय में करुणा उत्पन्न हो गई। भरत ने मृग-शावक को पानी में से निकाल लिया और उसे मातृहीन जानते हुए, अपने आश्रम में ले आए। विद्वान् इन्द्रियातीत पुरुष की दृष्टि में शरीरों के भेद निरर्थक होते हैं; क्योंकि भरत स्वरूप-सिद्ध थे, और यह जानते हुए कि परमात्मा (परमेश्वर) और आत्मा दोनों ही समान रूप से सभी शरीरों में वास करते हैं, वे सभी प्राणियों को समान दृष्टि से देखते थे। वे हिरन को प्रतिदिन ताजी, हरी घास खिलाते और उसे आराम देने का प्रयास करते। परन्तु शीघ्र ही उनके मन में हिरन के प्रति प्रगाढ़ आसक्ति उत्पन्न होने लगी। वे इसके साथ लेट जाते, इसके साथ ही चलते, स्नान करते और यहाँ तक कि इसके साथ भोजन भी करते। जब वे वन में कन्दफल-फूल इकट्ठा करने के लिए प्रवेश करते, तब अपने साथ हिरन को ले जाते, इस भय से कि यदि उन्होंने उसे पीछे छोड़ दिया, तो उसे कुत्ते, गीदड़ या बाघ मार डालेंगे। हिरन को वन में बालक की तरह उछलते, खेल-कूद करते देख कर भरत को बड़ा आनन्द आता। कभी कभी वे हिरन के बच्चे को अपने कंधों पर उठा कर ले जाते। उनका हृदय हिरन के प्रेम से इतना भर उठा कि वे उसे दिन भर गोदी में बिठाते, और जब वे सोते तो हिरन उनकी छाती पर लेटता। वे हरदम हिरन को थपथपाते रहते, और कभी-कभी तो उसे चूम भी लेते। इस प्रकार उनका हृदय हिरन के प्रति प्रेम में बंध गया।

हिरन के पालन-पोषण में आसक्त होने के कारण, भरत धीरे-धीरे भगवान् के ध्यान की उपेक्षा करने लगे। इस प्रकार वे आत्मसाक्षात्कार के मार्ग से विचलित हो गये, जो कि मनुष्य जीवन का वास्तविक लक्ष्य है। वेद हमें स्मरण कराते हैं कि निम्न योनियों में लाखों जन्म बिताने के बाद ही आत्मा को मानव-रूप प्राप्त होता है। इस भौतिक जगत् की तुलना कभी-कभी जन्म-मरण के समुद्र से कीजाती है और मानव-शरीर की तुलना उस दृढ़ नौका से की जाती है जो इस समुद्र को पार करने के लिए बनाई गयी है। वेद-शास्त्रों और सन्त-शिक्षकों अथवा गुरुओं को अनुभवी नाविकों से उपमा दी जाती है, और मानव-शरीर की सुविधाओं को अनुकूल हवाओं के समान माना जाता है, जो नाव को अभीष्ट गन्तव्य की ओर सरलता से चलने में सहायता करती हैं। यदि इन सभी सुविधाओं के होते हुए कोई मनुष्य अपने जीवन को आत्म-साक्षात्कार के लिए पूरी तरह उपयोग नहीं करता, तो वह आध्यात्मिक आत्महत्या का पाप करता है, और अगले जीवन में पशु-योनि में जन्म लेने का खतरा पैदा करता है।

यद्यपि भरत इन विचारों से परिचित थे, तथापि उन्होंने सोचा 'चूंकि इस हिरन ने मेरी शरण ली है, मैं इसके प्रति उदासीन कैसे हो सकता हूँ? यद्यपि यह मेरे आध्यात्मिक जीवन में विघ्न पैदा कर रहा है, मैं इसकी उपेक्षा नहीं कर सकता। जिसने मेरी शरण ली है, ऐसे असहाय जीव की उपेक्षा करना घोर अपराध होगा।'

एक दिन जब भरत ध्यान कर रहे थे, वे सदा की तरह भगवान् के बजाय हिरन के बारे में सोचने लगे। अपनी एकाग्रता भंग करते हुए, उन्होंने अपने चारों ओर देखा कि हिरन कहाँ है और जब वह कहीं नहीं मिला, तो उनका मन इस तरह उद्विग्न हो उठा, जैसे किसी कंजूस का धन खो जाने पर होता है। वे उठ खड़े हुए और आश्रम के आसपास के क्षेत्र में उसे खोजने लगे, परन्तु हिरन उन्हें कहीं न मिला।

भरत ने सोचा, 'मेरा हिरन कब लौटेगा? क्या चीतों और दूसरे जानवरों से वह सुरक्षित है? मैं उसे अपने बगीचे में घूमते हुए और हरी-हरी नरम दूब चरते हुए दोबारा कब देखेंगा?"

ज्यों-ज्यों दिन बीतने लगा भरत चिन्ता से अभिभूत होने लगे। 'क्या मेरे हिरन को किसी भेड़िये अथवा कुत्ते ने खा लिया है? क्या जंगली सूअरों के झुंड ने, अथवा किसी अकेले विचरते चीते ने उसपर आक्रमण कर दिया है। सूर्य अस्त होने जा रहा है और वह बेचारा पशु, जिसने अपनी माँ के मरने के बाद से मुझ पर विश्वास किया था, अभी तक नहीं लौटा है।'

उन्हें याद आने लगा, किस तरह वह हिरन उनके साथ खेलता था, और अपने मुलायम, नरम रोयेदार सींगों की नोक को उनसे छुआता था। उन्हें याद आया, किस प्रकार वे अपनी ध्यान-पूजा में विघ्न डाले जाने से परेशान होने का बहाना करते हुए कभी-कभी उसे दूर धकेल देते थे और किस प्रकार वह भय के कारण तत्काल बिना हिले-डुले उनसे थोड़ी दूरी पर बैठ जाता था।

'मेरा हिरन सचमुच एक छोटे से राजकुमार की तरह है। हाय, वह दोबारा कब लौटेगा? वह मेरे आहत हृदय को पुनः कब शान्त करेगा?"

अपने को संयमित न रख सकने के कारण, भरत चाँदनी में उसके छोटे-छोटे पद-चिह्नों के पीछे पीछे उसकी खोज में निकल पड़े। पागलपन की दशा में वे अपने आप से बातें करने लगे : 'यह प्राणी मुझे इतना प्रिय था कि मुझे लगता है, जैसे मैंने अपना ही पुत्र खो दिया है। बिछोह में जलाने वाले ताप के कारण मुझे ऐसा लगता है कि मैं स्वयं धधकती हुई दावाग्नि में फैसा हूँ। संताप से मेरा हृदय अब जल रहा है।'

किसी विक्षिप्त की भाँति वन के भयानक मार्गों में खोये हुए हिरन को खोजते हुए भरत अचानक गिर पड़े और उन्हें प्राणघातक चोट लगी। मृत्यु के क्षण में वहाँ पड़े हुए उन्होंने देखा कि उनका हिरन अकस्मात् वहाँ आ गया है और प्यारे बेटे की तरह पास

बैठा हुआ उनकी ओर देख रहा है। इस प्रकार उनकी मृत्यु के क्षण में उनका मन हिरन पर पूर्ण-रूप से केन्द्रित हो गया। भगवद्गीता से हमने सीखा है; 'शरीर त्याग करते समय मन में जिन-जिन भावों का स्मरण कोई करता है, वही स्थिति निश्चित रूप से उसे प्राप्त होगी।"

राजा भरत हिरन का जन्म लेते हैं

अगले जन्म में राजा भरत ने हिरन के शरीर में प्रवेश किया। अधिकतर जीव अपने विगत जन्मों को स्मरण नहीं कर पाते, परन्तु राजा भरत पूर्व जन्म में की हुई आध्यात्मिक उन्नति के कारण, हिरन के शरीर में होने पर भी उस शरीर में अपने जन्म लेने का कारण समझ सके। वे विलाप करने लगे, 'मैं कितना मूर्ख हूँ। मैं आत्म-साक्षात्कार के मार्ग से गिर गया हूँ। मैंने अपने परिवार और राज्य का त्याग किया और वन में एकान्त पवित्र स्थान में ध्यान के लिए चला आया, जहाँ मैंने ब्रह्मांड के स्वामी भगवान् का निरन्तर ध्यान किया। किन्तु अपनी मूर्खता के कारण, मैंने अपने मन को, सब कुछ छोड़ कर, एक हिरन में आसक्त होने दिया। अत: यह उचित ही है कि मुझे अब वही शरीर प्राप्त हुआ है। अपने अतिरिक्त, मैं किसी को दोष नहीं दे सकता।'

परन्तु हिरन के रूप में भी भरत एक मूल्यवान् पाठ सीख कर अपने आत्म-साक्षात्कार के मार्ग में प्रगति करते रहे। वे सभी भौतिक इच्छाओं से विरत हो गये। वे अब रसीली, हरी घास की चिन्ता कभी न करते, न ही वे कभी यह सोचते कि उनके सींग कितने लम्बे होंगे। इसी प्रकार अपनी माता को कालंजर पर्वतों में छोड़कर, जहाँ वे पैदा हुए थे, उन्होंने समान रूप से नर और मादा, सभी हिरनों का संग त्याग दिया। वे पुलह-आश्रम में लौट आये, जो वही स्थान था जहाँ पूर्वजन्म में उन्होंने ध्यान-साधना की थी। परन्तु इस बार वे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को कभी न भूलने के प्रति सावधान रहते थे। महान् सन्तों और ऋषियों के आश्रमों के समीप रहते हुए और भौतिकतावादियों से सभी तरह के सम्पर्क से अपने को बचाते हुए, वे बहुत सादा

जीवन बिताते और सूखे, कड़े पते ही खाते। जब मृत्यु का समय आया, और भरत हिरन का शरीर त्यागने लगे, तब उन्होंने ऊँचे स्वर में यह प्रार्थनाकी : 'पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् सम्पूर्ण ज्ञान के स्रोत हैं, सम्पूर्ण सृष्टि के नियन्ता हैं, और सभी प्राणियों के हृदय में निवास करने वाले परमात्मा हैं। वे सुन्दर और मनोहारी हैं। मैं उनको प्रणाम करता हुआ इस शरीर को छोड़ रहा हूँ और यह आशा करता हूँ कि मैं निरन्तर उनकी दिव्य प्रेममय भक्ति-सेवा में लगा रहूँ।"

जड़ भरत का जीवन

अगले जीवन में राजा भरत ने एक विशुद्ध सन्त जैसे ब्राह्मण पुरोहित के घर में जन्म लिया और वे जड़भरत के नाम से जाने जाते थे। भगवान् की दया से उन्हें फिर से अपने पूर्व-जन्मों का स्मरण था। भगवद्गीता में भगवान् कृष्ण ने कहा है, 'स्मृति, ज्ञान और विस्मरण मुझ से ही प्राप्त होते हैं।" ज्यों-ज्यों वे बड़े होते गये, जड़भरत अपने मित्रों और सम्बन्धियों से अत्यन्त भयभीत रहने लगे, क्योंकि वे लोग बहुत ही भौतिकतावादी थे और अपनी आध्यात्मिक प्रगति में उन लोगों की तनिक भी रुचि नहीं थी। बालक निरन्तर चिन्ता में रहता, क्योंकि उसे भय था कि उन लोगों के प्रभाव से वह पुन: पशु-जीवन में न गिर जाए। अतः अत्यन्त बुद्धिमान् होने पर भी, वे एक पागल मनुष्य की तरह व्यवहार करते। वे मूर्ख, अन्धा और बहरा होने का स्वाँग करते, जिससे संसारी लोग उनसे बात करने का प्रयास न करें। परन्तु अपने भीतर वे भगवान् के विषय में सदैव सोचते रहते और उनकी महिमाओं का गान करते रहते, क्योंकि यही बारम्बार होने वाले जन्म-मृत्यु के चक्र से मनुष्य को बचा सकता है।

जड़भरत के पिता उनसे बहुत स्नेह करते थे, और वे अपने मन ही मन आशा करते थे कि जड़भरत एक दिन सुशिक्षित विद्वान् बन जाएँगे। अत: उन्होंने वैदिक ज्ञान की जटिलताओं को उन्हें समझानेका प्रयास किया। परन्तु जड़भरत जानबूझ कर मूर्ख-जैसा व्यवहार करते थे, जिससे उनके पिता उन्हें शिक्षा देने के अपने प्रयत्नों को छोड़ दें। यदि

उनके पिता उन्हें कुछ करने को कहते, तो वे उसके बिल्कुल विपरीत करते। ऐसा होते हुए भी, जड़भरत के पिता मृत्युपर्यत बालक को शिक्षा देने का सदा प्रयास करते रहे।

जड़भरत के नौ सौतेले भाई उन्हें बुद्धिहीन और मूर्ख समझते थे और जब उनके पिता मर गये, तो उन्होंने जड़भरत को शिक्षा देने के सभी प्रयास छोड़ दिये। वे जड़भरत की आंतरिक आध्यात्मिक उन्नति को समझ नहीं सके। परन्तु जड़भरत उनके दुर्व्यवहार के विरुद्ध कभी प्रतिवाद न करते, क्योंकि वे देहात्मबुद्धि से पूर्णतया मुक्त हो चुके थे। जो भोजन उन्हें मिल जाता, वे उसे स्वीकार करते और खा लेते, चाहे वह अधिक हो या कम, सुस्वादु हो या बेस्वाद। वे पूर्ण आध्यात्मिक चेतना में स्थित थे, अत: वे गर्मी और सर्दी जैसे भौतिक द्वन्द्रों से व्यग्र नहीं होते थे। उनका शरीर साँड की तरह सशक्त था और उनके हाथ-पाँव अत्यन्त बलिष्ट थे। वे शीत ऋतु की सर्दी और ग्रीष्म ऋतु की गर्मी, वायु और वर्षा, किसी की परवाह नहीं करते थे। चूँकि उनका शरीर सदा मलिन रहता, अत: उनका आध्यात्मिक ज्ञान और उनकी ओजस्विता, मैल और मिट्टी से ढके किसी मूल्यवान् रत्न की भाँति ढक गये थे। प्रतिदिन साधारण लोग उनको अपमानित और तिरस्कृत करते थे, जो उन्हें बेकार मूर्ख से अधिक कुछ नहीं समझते थे।

जड़भरत को पारिश्रमिक में मिलता था, उनके भाइयों द्वारा दिया गया बेस्वाद, थोड़ा-सा भोजन, जो खेतों में किसी बँधुआ मजदूर की तरह उनसे काम लेते थे। परन्तु जड़भरत मामूली-सा काम भी ठीक से नहीं कर पाते थे, क्योंकि उन्हें मालूम नहीं था कि मिट्टी कहाँ फैलाई जाये अथवा भूमि को कहाँ समतल बनाया जाये। भोजन के लिए उनके भाई उन्हें चावल की कणकी, चावल की छाँटन, खली, कीड़ोंद्वारा छाने गये दाने, पकाने के बर्तनों के तले चिपका रह जाने वाला जला हुआ अन्न देते, परन्तु जड़भरत उन्हें अमृत मान कर प्रसन्नता से स्वीकार कर लेते। उनके मन में कोई दुर्भाव

नहीं होता था। इस प्रकार वे अपने व्यवहार में पूर्ण आत्म-साक्षात्कार कर चुके जीव के सभी लक्षण प्रदर्शित करते थे।

एक समय चोरों और हत्यारों के एक गिरोह का मुखिया भद्रकाली के मंदिर में एक ऐसे मनुष्य की बलि देने के लिए गया जो पशुवत् जड़ और बुद्धिहीन हो। ऐसी बलियों का वेदों में कहीं भी वर्णन नहीं है, किन्तु डाकुओं ने धन-सम्पदा प्राप्त करने के उद्देश्य से ऐसी मनगढ़न्त बलि-प्रथा बना ली थी। किन्तु जब वह पुरुष जिसकी बलि चढ़ाई जानी थी, बच कर भाग निकला, तब उनकी योजना विफल हो गई। अत: डाकुओं के सरदार ने उसे खोजने के लिए अपने अनुचरों को भेजा। अंधेरी रात में खेतों और जंगलों में खोजते हुए डाकू एक धान के खेत में आये और उन्होंने जड़भरत को देखा, जो जंगली सूअरों के आक्रमण से खेत की रखवाली करने के लिए ऊँची मचान पर बैठे थे। डाकुओं ने सोचा कि जड़भरत पूर्णरूप से बलि के योग्य होगा। प्रसन्नता से उनके मुख चमक उठे, और उन्होंने मजबूत रस्सियों से उन्हें बाँध लिया, और वे उन्हें कालीदेवी के मंदिर में ले आये। भगवान् के द्वारा अपनी रक्षा किए जाने के प्रति पूर्ण निष्ठा के कारण जड़भरत ने कोई विरोध नहीं किया। एक विख्यात आचार्य (आध्यात्मिक गुरु) द्वारा रचित एक गीत है, 'हे भगवान्! मैं अब आपको समर्पित हूँ। मैं आपका सनातन दास हूँ, आप चाहें तो मुझे मार सकते हैं अथवा रक्षा कर सकते हैं। प्रत्येक दशा में, मैं आपका पूर्णरूपेण शरणागत हूँ।"

डाकुओं ने जड़भरत को स्नान करवाया, उन्हें नए रेशमी परिधान पहनाये और उन्हें मालाओं और आभूषणों से अलंकृत किया। उन्होंने उनको भरपेट अन्तिम भोजन करवाया और वे उन्हें देवी के सम्मुखले आये, जिनकी उन्होंने गीतों और स्तुतियों से पूजा की। जड़भरत को देवी के सम्मुख बैठने को विवश कर दिया गया। तब उन चोरों में से एक ने प्रमुख पुजारी की भूमिका निभाते हुए, जड़भरत के गले को काटने के लिए

उस्तरे जैसी तेज धार वाली तलवार को उठाया जिससे वे काली देवी को (जड़भरत का) गर्म रुधिर, मदिरा के रूप में अर्पित कर सकें।

परन्तु देवी इसे न सह सकी। वे समझ गई कि पापी चोर भगवान् के एक महान् भक्त को मारने जा रहे हैं। अकस्मात्, देवी का विग्रह फट गया और प्रचण्ड एवं असह्य तेज से जलते हुए शरीर वाली देवी साक्षात् प्रकट हो गई। कुद्ध देवी ने अपनी जलती आँखें चमकाई और अपने विकराल, वक्रदन्त दिखलाये। उनकी आँखें व रतवस्त्र दमदमाये, और ऐसा लगा कि वे समूचे विश्व को नष्ट करने के लिए तत्पर हैं। वेदी पर से विकराल रूप से छलांग लगाते हुए, उन्होंने उन सभी चोरों और बदमाशों के सिर उसी तलवार से काट डाले, जिससे वे सन्त जड़भरत को मारना चाहते थे।

राजा रहूगण को जड़भरत का उपदेश

काली-मंदिर से बच निकलने के पश्चात् जड़भरत ने अपना परिभ्रमण चालू रखा। वे साधारण भौतिकतावादी मनुष्यों से दूर रहते थे।

एक दिन, जब सौवीर के राजा रहूगण। कई दासों के कंधों पर उठाई जा रही पालकी में उस जिले में से ले जाये जा रहे थे, तब वे पुरुष थके होने के कारण लड़खड़ाने लगे। यह जानकर कि इक्षुमती नदी को पार करने में सहायता के लिए उन्हें एक और व्यक्ति की आवश्यकता होगी, राजा के सेवकों ने किसी और व्यक्ति की खोज करनी प्रारम्भ कर दी। इतने में ही उनकी नजर जड़भरत पर पड़ी, जो युवा और बैल की तरह बलिष्ट होने के कारण उचित व्यक्ति प्रतीतहुए। परन्तु जड़भरत सभी प्राणियों को भ्रातृवत् मानते थे, अत: वे यह काम भलीभाँति न कर सके। जब वे चलते, वे यह निश्चित करने को रुक जाते कि कहीं उनके पैर चींटियों पर तो नहीं पड़ रहे हैं। पुनर्जन्म के सूक्ष्म, किन्तु निश्चित विधानों के अनुसार उच्चतर योनि को प्राप्त करने से पूर्व सभी जीवधारियों को विशिष्ट कालाविधि के लिए एक विशिष्ट शरीर में रहना पड़ता है। जब एक पशु को निर्धारित समय से पूर्व मार दिया जाता है, तो आत्मा को

उसी प्रकार के शरीर के पिंजरे में अपना वास पूरा करने के लिए उसी योनि में लौटना पड़ता है। अतएव वेदों का यह आदेश है कि प्रत्येक मनुष्य को मनमाने ढंग से दूसरे प्राणियों की हत्या करने से सदा बचना चाहिए।

विलम्ब क्यों हो रहा है, यह न जानते हुए राजा रहूगण। चिल्लाया, 'यह क्या हो रहा है? क्या तुम इसे ठीक तरह नहीं उठा सकते? मेरी पालकी इस तरह क्यों हिलडुल रही है?"

राजा की धमकी भरी आवाज सुनकर, भयभीत सेवकों ने उत्तर दिया कि यह अव्यवस्था जड़भरत के कारण हो रही है। राजा ने क्रोध में आकर उन्हें डाँटा, और कटाक्षपूर्वक कहा कि जड़भरत पालकी को ऐसे ले जा रहे हैं जैसे कि वे अत्यन्त दुबले-पतले, थके हुए बूढ़े व्यक्ति हों। परन्तु जड़भरत जो अपनी असली आध्यात्मिक वास्तविकता से परिचित थे, जानते थे कि वे शरीर नहीं हैं। न तो वो मोटे हैं, न पतले, और न उनका उस शरीर से कोई सरोकार है, जो मांस के लोथड़े और हड़ियों से बना है। वे जानते थे कि यंत्र के भीतर बैठे हुए चालक की तरह, वे शरीरस्थ सनातन आत्मा हैं। अत: जड़भरत राजा की कुद्ध आलोचना से अप्रभावित रहे। यदि राजा उनको मृत्युदण्ड भी देते, तो भी वे परवाह न करते, क्योंकि वे जानते थे कि आत्मा अमर है और इसे कभी मारा नहीं जा सकता। जैसा कि भगवान् श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं, 'शरीर के मारे जाने पर आत्मा नहीं मारा जाता।'

जड़भरत मौन रहे और पालकी को पूर्ववत् ढोते रहे, परन्तु राजा अपने क्रोध को वश में न रख सकने के कारण चिल्लाया, 'ओ नीच बदमाश! तू यह क्या कर रहा है? क्या तू नहीं जानता कि मैं तेरा स्वामी हूँ? आज्ञा के उल्लंघन के कारण मैं तुझे अब दण्ड दूंगा।"

जड़भरत बोले, 'मेरे प्रिय राजा! जो कुछ तुमने मेरे विषय में कहा है वह सच है। तुम यह समझते प्रतीत होते हो कि मैंने तुम्हारी पालकी को ढोने के लिए बहुत अधिक

श्रम नहीं किया है। यह सच है, क्योंकि वास्तव में मैं तुम्हारी पालकी को बिल्कुल भी नहीं ढो रहा हूँ। इसे मेरा शरीर ढो रहा है, किन्तु मैं यह शरीर नहीं हूँ। तुम मुझे दोष देते हो कि मैं बहुत हट्टा-कट्टा और मजबूत नहीं हूँ किन्तु इससे तुम्हारा आत्मा-सम्बंधी अज्ञान ही प्रकट होता है। शरीर मोटा या पतला, दुर्बल या बलिष्ट हो सकता है, परन्तु कोई भी विद्वान् अन्तरात्मा के विषय में ऐसा नहीं कह सकता। जहाँ तक मेरे आत्मा का सम्बंध है, न तो यह मोटा है और न दुबला, इसलिए तुम सच ही कह रहे हो कि मैं बहुत मजबूत नहीं हूँ।"

तब जड़भरत यह कहते हुए राजा को उपदेश देने लगे कि, 'तुम समझते हो कि तुम अधिपति हो, मालिक हो और इसीलिए तुम मुझे आदेश देने की चेष्टा कर रहे हो, परन्तु यह भी सही नहीं है क्योंकि ये सारे पद क्षणभंगुर हैं। आज तुम राजा हो और मैं तुम्हारा दास हूँ परन्तु हमारे अगले जन्मों में यह स्थिति उलट सकती है; तुम मेरे दास और मैं तुम्हारा स्वामी हो सकता हूँ।"

जिस प्रकार समुद्र की लहरें तिनकों को एक साथ ले आती हैं, और फिर उन्हें अलग अलग कर देती हैं, उसी प्रकार सनातन काल की शक्ति प्राणियों को अस्थायी सम्बंधों में जोड़ देती है, जैसे कि स्वामी और दास, और फिर उन्हें अलग कर देती है, और उनकी पुनव्यवस्था करती है।

जड़भरत बोलते गये : 'किसी भी दशा में, कौन स्वामी है और कौन दास? भौतिक प्रकृति के विधान के अनुरूप प्रत्येक प्राणी कर्म करने के लिए विवश है; अतएव न तो कोई स्वामी है, और न कोई दास।'

वेदोंने व्याख्या की है कि इस भौतिक जगत् में मनुष्य रंगमंच के पात्रोंकी तरह हैं, जो किसी श्रेष्ठ व्यक्ति के निर्देशन के अनुसार अभिनय करते हैं। मंच पर कोई पात्र स्वामी का अभिनय कर सकता है, तो दूसरा उसके नौकर का। परन्तु वास्तव में वे दोनों ही निर्देशक के दास हैं। इसी प्रकार, सभी प्राणी भगवान् श्रीकृष्ण के दास हैं।

भौतिक जगत् में स्वामी और नौकर के उनके अभिनय, अस्थायी और प्रतिबिम्ब-स्वरूप हैं।

राजा रहूगण को यह सब बताने के बाद, जड़भरत ने कहा, 'यदि तुम अब भी समझते हो कि तुम स्वामी हो और मैं नौकर हूँ तो मैं इसे मान लेता हूँ। कृपया आदेश दो। मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूँ?"

राजा रहूगण। जो अध्यात्म-विज्ञान में प्रशिक्षित थे, जड़भरत के उपदेश सुनकर चकित रह गये। यह समझ कर कि जड़भरत एक सन्त व्यक्ति हैं, राजा तत्काल पालकी से उतर गए। अपने विषय में महान् सम्राट् होने की उनकी भौतिक संकल्पना समाप्त हो गई, और उस सन्त पुरुष के चरणों में सिर रख कर, वे नम्रतापूर्वक साष्टांग प्रणाम करते हुए अपने शरीर को पृथ्वी पर फैला कर लेट गये।

'हे सन्त महात्मन्! आप संसार में अज्ञात रूप में विचरण क्यों कर रहे हैं? आप कौन हैं? आप कहाँ रहते हैं? आप इस स्थान पर किस कारण से आये हैं? हे गुरुदेव! मैं आध्यात्मिक-ज्ञान में अंधा हूँ। कृपया उपदेश दें कि मैं आध्यात्मिक जीवन में कैसे उन्नति करूं।"

राजा रहूगण का व्यवहार अनुकरणीय है। वेद घोषणा करते हैं कि प्रत्येक मनुष्य को, चाहे वह राजा हो, आत्म-ज्ञान और पुनर्जन्म की प्रक्रिया को समझने के लिए आध्यात्मिक गुरु के पास जाना चाहिए।

मिसिंग पेज न. 72

की जा सकती है और इस भौतिक जगत् की भ्रामिक संगति को विखंडित किया जा सकता है।

जब तक मनुष्य को भगवान् के भक्तों की संगति का अवसर नहीं मिलता, तब तक वह आध्यात्मिक जीवन के विषय में प्रारंभिक बात को समझने में भी असमर्थ रहेगा। जिसे महान् भक्त की कृपा प्राप्त होती है, उसी को परम सत्य प्रकट होता है,

क्योंकि विशुद्ध भक्तों की सभा में राजनीति और समाजशास्त्र जैसे भौतिक विषयों पर चर्चा का प्रश्न ही नहीं उठता है। विशुद्ध भक्तों की मंडली में केवल पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के ही गुणों, रूपों और लीलाओं की चर्चा होती है, तथा पूर्ण श्रद्धा के साथ उनकी पूजा और स्तुति की जाती है। यह एक सरल रहस्य है जिसके द्वारा प्रसुप्त आध्यात्मिक चेतना को पुनरुज्जीवित किया जा सकता है, सदा के लिए पुनर्जन्म के भयावह चक्र को समाप्त किया जा सकता है और आध्यात्मिक लोक के सनातन आनन्द के जीवन की ओर लौटा जा सकता है।

महान् भक्त जड़भरत से उपदेश ग्रहण करने के पश्चात्, राजा रहूगण। आत्मा की वैधानिक स्थिति से पूर्णतया परिचित हो गया, और उसने जीवन की देहात्मबुद्धि को पूरी तरह त्याग दिया, जो भौतिक संसार में जन्म-मृत्यु के अन्तहीन चक्र में शुद्ध आत्माओं को बांधे रखती है।

3

उस पार के आगन्तुक

जब मनुष्य शरीर का त्याग करता हैं, उस समय जिस भी आत्म स्थिति का वह स्मरण करता है, वही स्थिति निश्चित रूप से वह प्राप्त करेगा।

भगवद्गीता – 8.6

मृत्यु के पश्चात् आत्मा ज्योंही अपनी रहस्यमयी यात्रा के लिए प्रस्थान करता है, संसार के महान् धर्मों की परम्पराओं के अनुसार, वह वास्तविकता के दूसरे छोरों से आये हुए जीवों से मिलता है, जो उसे सहायता देते हैं, जैसे फरिश्ते, देवदूत, अथवा न्यायमूर्ति जो ब्रह्माण्डीय न्याय की तुला पर उसके पुण्य और पापों को तौलते हैं। मानव जाति के सांस्कृतिक इतिहास की सम्पूर्ण शृंखला में व्याप्त नाना प्रकार की धार्मिक कलाकृतियाँ इन दृश्यों का बोध कराती हैं। मिट्टी के एट्रस्कन बर्तनों के एक टुकड़े पर बनी एक चित्रकारी में ऐसी एक देवदूत को किसी गिरे हुए योद्धा की सेवा में जुटे हुए दिखाया गया है। मध्यकालीन युग की एक ईसाई पच्चीकारी में अपने हाथों में न्याय का तराजू पकड़े हुए गम्भीर संत माइकल का चित्रण है। बहुत से लोग जिनको आसन्न मृत्यु का अनुभव हुआ है, प्राय: इस प्रकार के प्राणियों से मिलने की बात करते हैं।

भारतवर्ष के वैदिक शास्त्रों से हम भगवान् विष्णु के दूतों के बारे में जानते हैं, जो मृत्यु के समय प्रकट होकर पवित्र आत्मा को वैकुण्ठ जगत् की ओर जाने वाले मार्ग में साथ चलते हैं। वेदों में मृत्यु केदेवता यमराज के भयानक दूतों की चर्चा भी है, जो पापात्मा को बलपूर्वक पकड़ कर भौतिक शरीर रूपी कारागार में अगला जन्म लेने के लिए तैयार करते हैं। इस ऐतिहासिक वर्णन में भगवान् विष्णु के दूत और यमराज के दूत अजामिल की आत्मा के भाग्य के विषय में इस निर्णय के लिए आपस में विवाद करते हैं कि उसे मुक्त किया जाए या पुनर्जन्म दिया जाए।

कान्यकुब्ज नामक नगर में सन्त-स्वभाव का एक युवा ब्राह्मण पुरोहित, अजामिल रहता था, जो एक वेश्या के प्रेम में फैंसने के कारण आध्यात्मिक जीवन के मार्ग से गिर गया और अपने सभी सद्गुणों को खो बैठा। अपने पुरोहिताई के कर्तव्यों को त्याग कर, वह डाके डालकर और जुआ खेलकर अपनी जीविका कमाने लगा, और अपना जीवन कामाचार में बिताने लगा।

अट्ठासी वर्ष का होने तक अजामिल को वेश्या से दस पुत्र हो चुके थे। उनमें से सबसे छोटे बालक का नाम नारायण था-जो भगवान् विष्णु के नामों में से एक नाम है। अजामिल का इस छोटे पुत्र के प्रति अत्यधिक लगाव था, और उसे बालक के चलने और बोलने की आरम्भिक चेष्टाओं को देखने में बहुत आनन्द आता था।

एक दिन, बिना चेतावनी के, मूर्ख अजामिल की मृत्यु का समय आ गया। भयभीत हुए उस बूढ़े ने अपने सामने भयंकर आकृतियाँ देखीं, जिनके चेहरे डरावने और कुरूप थे। ये सूक्ष्म प्राणी, जिनके हाथों में रस्सियाँ थीं, उसे मृत्यु के स्वामी यमराज के दरबार में बलपूर्वक ले जाने के लिए आये थे। इन भयावह प्रेत-जैसे जीवों को देखकर, अजामिल के होश उड़ गये, और पास में ही खेल रहे अपने प्रिय पुत्र के प्रेमवश वह जोर से चीखने लगा, 'नारायण। नारायण!" आँसुओं से भरी आँखों के साथ अपने छोटे पुत्र के लिए रोते हुए उस महापापी अजामिल ने अनजाने ही भगवान् के पवित्र नाम का उच्चारण किया।

मरते हुए अजामिल द्वारा भावुकता के साथ पुकारे गए अपने स्वामी के नाम को सुन कर, भगवान विष्णु के दूत क्षणभर में ही वहाँ आ गये। वे भगवान् विष्णु जैसे ही दिखते थे। उनकी आँखें कमलपुष्प की पंखुड़ियों जैसी थीं। वे चमकते सोने के मुकुट और चमचमाते पीत रेशमी वस्त्र धारण किये थे और उनके सुगठित शरीर नीले और दूध जैसे श्वेत कमलों की मालाओं से सजे थे। वे ताजा और युवा लगते थे और उनकी

चकाचौंध कर देने वाली आभा ने अन्धेरे मृत्यु-कक्ष को प्रकाशमान कर दिया। उनके हाथों मे धनुष, बाण, तलवारें, शंख, गदाएँ चक्र और कमल पुष्प थे।

विष्णुदूतों ने यमराज के दूतों को देखा, जो अजामिल के हृदय में से उसकी आत्मा को निकाल रहे थे। गूंजती हुई आवाजों में विष्णुदूत चिल्लाये, 'रुक जाओ!"

यमदूत, जिनको पहले कभी किसी प्रकार के विरोध का सामना नहीं हुआ था, विष्णुदूतों के कठोर आदेश को सुन कर काँप उठे। उन्होंने पूछा : 'आप कौन हैं? आप हमें क्यों रोकने का प्रयास कर रहे हैं? हम मृत्यु के स्वामी यमराज के दूत हैं।"

विष्णु के दूत मुस्कराये और मेघ के समान गरजते हुए गम्भीर स्वर में बोले : 'यदि तुम सचमुच ही यमराज के दूत हो, तो हमें जन्ममृत्यु के चक्र का अर्थ बताओ। हमें बताओ कि किसे इस चक्र में प्रवेश करना चाहिए और किसे नहीं?"

यमदूतों ने उत्तर दिया, 'सूर्य, अग्नि, आकाश, वायु, देवता, चन्द्रमा, सन्ध्या, दिन, रात्रि, दिशाएँ जल, पृथ्वी और परमात्मा अर्थात् हृदय में वास करने वाले प्रभु, ये सब समस्त जीवों के कर्मों के साक्षी होते हैं। जन्म-मृत्यु के चक्र में दण्डित किए जाने वाले वे लोग होते हैं, जिनकी अपने-अपने धार्मिक कर्तव्यों से भ्रष्ट होने की पुष्टि ये साक्षी करते हैं। इस जीवन में अपने धार्मिक अथवा अधार्मिक कर्मों के